आपदा प्रबन्धन

समाचार पत्रिका 9 (1), 2015

मुख्य सम्पादकः

डा. पीयूष रौतेला

सम्पादक मण्डलः

डा. के. एन. पाण्डे
मे. (से. नि.) राहुल जुगरान
भूपेन्द्र भैसोड़ा
गोविन्द रौतेला

प्रारूपः

गोविन्द रौतेला

सम्पर्कः

अधिशासी निदेशक
आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबन्धन केन्द्र
उत्तराखण्ड सचिवालय
देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड)
दूरभाष : 91–135–2710232
–2710233
फैक्स : 91–135–2710199
वैब साईट: http://dmmc.uk.gov.in

इस पत्रिका में व्यक्त किये गये विचार लेखकों के व्यक्तिगत विचार हैं और आवश्यक नहीं है कि वह आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबन्धन केन्द्र के विचारों को प्रतिबिम्बित करें। लेखक द्वारा व्यक्त विचारों के लिये आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबन्धन केन्द्र उत्तरदायी नहीं है।

For the cause of capacity building

Capacity building is an ongoing process through which individuals, groups, organizations and societies enhance their ability to identify and meet related challenges around them. It is in fact an ongoing exercise with no end. Many disaster managers like to include capacity building under mitigation while others list it under preparedness phase. All however agree that capacity building and mitigation holds the key to effective disaster management.

Compared to post-disaster events related to disaster management, capacity building and mitigation are both, however often neglected even though these have direct bearing upon the magnitude and frequency of disasters as also losses caused by disaster. Inadequate investment on capacity building is often attributed to lack of immediate and tangible outputs, inadequate media attention and public pressure.

Even after creation of organizations for disaster management these initiatives could however not be taken up seriously due to the lack of organized funds for these important tasks. Disaster Management Act, 2005 however highlighted the importance of the pre-disaster initiatives and together with entrusting a number of related responsibilities on organizations concerned it clearly pronounced the requirement of having Disaster Mitigation Fund at nation, state and district level.

Due to financial constraints Mitigation Fund could not however materialize. Some states no doubt went ahead with the spirit of the Act and constituted Mitigation Fund on their own hoping that the central government would contribute accordingly. With no initiative in this regard from the central government most funds created by the states are lying idle.

The decision relating to setting up of Disaster Mitigation Fund at state and district level was left to the discretion of state governments by 13th Finance Commission. However realising the importance of disaster preparedness it recommended allocation of Rs. 525 crore for capacity building.

Resources for capacity building were however available earlier as well and the norms of assistance out of CRF (now SDRF) allowed for spending of 10 percent of the resources on training of specialist multi-disciplinary groups of the state personnel drawn from different cadres involved in management of disasters as

also on the procurement of essential search, rescue and evacuation equipment including communication equipment.

The recommendations of 13th Finance Commission however gave flexibility to the state governments to use the funds specifically kept apart for capacity building for initiatives related to mass awareness, community based disaster risk reduction, hazard, risk and vulnerability assessment as also for setting up and upgrading their organizational set up.

As the period of 13th Finance Commission was coming to close and deliberations were on for drafting of 14th Finance Commission recommendations, everyone involved in disaster management related affairs was sure that there would be major increase in the allocation under capacity building. Success of disaster preparedness on the aftermath of 2013 Phalin cyclone was one of the reasons for this confidence.

The Ministry of Home Affairs, in its memorandum, had requested the Commission to consider recommending a sum of Rs. 80 crore for strengthening the State and District Disaster Management Authorities, and enhancing the grant-in-aid for capacity building recommended by the 13th Finance Commission to Rs. 1,050 crore. On its part, NDMA had also suggested doubling of the capacity-building grant. In addition, the NDMA had asked for funds to set up emergency operation centres in the states and districts, especially those prone to multiple hazards, and a national-level National Emergency Operation Centre at the NDMA Control Room.

To the surprise of all the 14th Finance Commission in its recommendations all together scrapped the capacity building grant and said that all disaster management related issues other than SDRF be best considered by the union government and the state governments concerned.

With this the fate of various programs initiated and sustained by the state governments over the previous five years is sure to be jeopardized. In case adequate measures are not taken immediately many of the ongoing schemes would be derailed soon and this is sure to be a setback for pre disaster preparedness levels.

Immediate solution to this problem could well be found in SDRF guidelines issued by the Ministry of Home Affairs. A certain percentage of annual SDRF allocation could thus be allowed for capacity building. This decision however has to be taken before it is too late, as mobilizing resources after derequisitioning these at the end of the current financial year would be an uphill task.

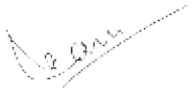

(Piyoosh Rautela)

हिमालय और बाँध निर्माण

-के. एस. सजवाण

वैसे तो पहले भी बाँध निर्माण के फायदे एवं नुकसान का प्रश्न लोगों के जेहन में उठता रहा है मगर जून 2013 की आपदा ने भूवैज्ञानिक दृष्टि से संवेदनशील हिमालयी क्षेत्र में बाँध निर्माण एवं उससे होने वाले फायदे, यानी बिजली उत्पादन पर प्रश्न चिन्ह अवश्य लगा दिया है। आपदा के तुरन्त बाद से पर्यावरणविदों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, बाँध निर्माण में लगी कम्पनीयों के प्रतिनिधियों एवं राजनेताओं के मध्य निरंतर बाँध निर्माण से होने वाले फायदे एवं नुकसान पर शुरू हुयी बहस तथा एक-दूसरे के ऊपर आरोप-प्रत्यारोपों का दौर अभी तक जारी है। अन्य के साथ न्यायपालिका भी इस विषय से जुड़े तथ्यों की जाँच-पड़ताल में लगी है। इस सब के बीच अभी हाल ही में एक भूतपूर्व केन्द्रीय मंत्री द्वारा बाँध निर्माण के लिए दी जाने वाली पर्यावरणीय स्वीकृतियों के लिये उच्च स्तर से निर्देश मिलने से सम्बन्धित बयान ने इस विषय को एक बार फिर से सनसनीखेज बना दिया है।

एक ओर जहाँ ज्यादातर लोग बाँध निर्माण को आपदा एवं पर्यावरणीय नुकसान के लिये जिम्मेदार मानते हैं, वहीं दूसरी तरफ तथाकथित वैज्ञानिक एवं प्रगतिशील सोच रखने वाले लोग बाँध निर्माण का आपदा से किसी तरह का कोई सम्बन्ध न होने की बात करते है। इनमें से ज्यादातर टिहरी बाँध के उदाहरण को इस सम्बन्ध में दिए जाने वाले तर्को के लिए सबसे मुफीद पाते हैं। उनका कथन है कि टिहरी बाँध ने आपदा को रोकने का काम किया है और यदि यह बाँध नहीं होता तो नीचे ऋषिकेश व हरिद्वार में जलप्रलय आ गया होता।

प्रश्न यहाँ बाँध से होने वाले फायदे एवं नुकसान के साथ ही घटिया निर्माण एवं पर्यावरणीय पहलुओं की अनदेखी का भी हैं। सभी लोग

बहस के दौरान उपरोक्त दोनों ही पहलुओं की प्रायः अनदेखी करते नजर आते हैं। यह तथ्य सर्वविदित है कि मूलभूत एवं बुनियादी सुविधाओं के लिए किया जाने वाला निर्माण कार्य अत्यन्त आवश्यक है परन्तु आवश्यकता की आड़ में पर्यावरणीय एवं तकनीकी पहलुओं को नजरअन्दाज भी तो नहीं किया जा सकता। परन्तु यहाँ ज्यादातर स्थितियों में सच्चाई इसके उलट ही रही है। विकास के नाम पर घटिया निर्माण यहाँ एक दस्तूर बन गया है। पहले यह बात सिर्फ सड़क और नहर निर्माण तक सीमित था परन्तु अब इसने बाँध निर्माण को भी अपने घेरे में लेना शुरू कर दिया है। यदि गुणवत्ता व तकनीकी पहलुओं को ध्यान में रख कर काम किये जाये तो यह सर्वथा ही मानव जाति के कल्याण में सहायक सिद्ध होंगे। परन्तु यदि इन पक्षों की अनदेखी की गयी तो यह हमारे विनाश का कारण भी बन सकता है। इसका उपयुक्त उदाहरण 2013 की आपदा के दौरान स्पष्ट देखने को मिला।

यहाँ पर स्पष्ट कर देना ठीक होगा कि सड़क एवं बाँध निर्माण दोनों ही न सिर्फ उत्तराखण्ड बल्कि सभी हिमालयी राज्यों के विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। परन्तु दोनों ही के निर्माण के दौरान विस्फोटकों के उपयोग पर नियंत्रण, मलबे का उचित स्थानों पर निस्तारण, वन कटाई पर नियन्त्रण एवं पर्याप्त मात्रा में पौधारोपण करके काफी हद तक पर्यावरण को होने वाले नुकसान से बचा जा सकता हैं। इसके अतिरिक्त यदि तकनीकी पहलुओं की बात करें तो भूवैज्ञानिक रूप से संवेदनशील क्षेत्रों (फाल्ट/थ्रस्ट जैसे कि मेन सेन्ट्रल थ्रस्ट), पुराने भूस्खलन क्षेत्रों, नदी तटों से उचित दूरी बना कर एवं अभियांत्रिकी मानकों का ठीक से अनुपालन कर के बाद में सम्भावित क्षति को निश्चित ही कम किया जा सकता है।

श्रीनगर गढ़वाल में बन रही जल विद्युत परियोजना घटिया निर्माण का जीता-जागता उदाहरण है। उच्च हिमालयी क्षेत्रों से लाये गये मलबे को नदी अपनी भू-आकृति के कारण एक सीमित दूरी तक ही ले जाने में समर्थ है। यदि केदारनाथ से मन्दाकिनी द्वारा लाए गए मलबे की बात करें तो इसे नदी के द्वारा सोनप्रयाग एवं सीतापुर तक ही बिछाया जा सका। जहाँ तक श्रीनगर में हुई तबाही का सम्बन्ध है, अलकनन्दा में आयी बाढ़ के द्वारा बाँध निर्माता कम्पनी द्वारा नदी तटों पर निस्तारित मलबा कीर्तिनगर के पूर्व में औद्यानिक प्रशिक्षण संस्थान के मैदान में बिछा दिया। कीर्तिनगर में घाटी के संकरा होने एवं इसके ऊपर श्रीनगर में घाटी के चौड़ा होने के कारण नदी के बहाव में आए ठहराव की वजह से नदी इतनी अधिक मात्रा में मलबे को आगे ले जाने में असमर्थ थी। इस बात की पुष्टि गढ़वाल विश्वविद्यालय के भूविज्ञान विभाग द्वारा किये गये शोध से भी होती है।

श्रीनगर की ज्यादातर जनता का शुरू से ही मानना था कि बाँध के द्वारा तबाही को न्योता दिया गया जबकि कुछ लोग यह भी मानते है

कि बाँध न होता तो श्रीनगर में हुई तबाही का नजारा कुछ और ही होता। इस प्रकार जिस बाँध ने बाढ़ से बचाव करना था उसने मलबे का उचित स्थानों पर निस्तारण न होने की वजह से श्रीनगर में तबाही ला दी। यह बात तो तय है कि नदी कुछ सालों के अंतराल में वापस अपने बाढ़ क्षेत्र पर अधिपत्य जमाती है। ऐसे में पूर्व में नदी द्वारा तय अधिकतम बाढ़ सीमा से कुछ अधिक दोबारा नदी द्वारा घेरने की सम्भावना जताना गलत नहीं होगा।

आज श्रीनगर में स्थित जल विद्युत परियोजना घटिया निर्माण एवं पर्यावरणीय पक्षों की अनदेखी के कारण श्रीनगर शहर के लिए अभिशाप बन गई हैं। तकनीकी एवं इंजिनियरिंग ने जहाँ दुनियाँ को बहुत कुछ दिया है वही हिमालयी क्षेत्रों में अपभूतपूर्व निर्माण करके मानव जाति के कल्याण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। वहीं गीत की इन पंक्तियों को सत्य साबित किया हैं:-

मनुष्य तू बड़ा महान है, तू जो चाहे पर्वत पहाड़ों को तोड़ दे,
तू जो चाहे नदियों के मुख को भी मोड़ दे।

टिहरी बाँध इसका जीता-जागता उदाहरण दिखाई पड़ता है। भारतीय रेलवे के इन्जिनियरों ने जम्मू से वैष्णों देवी-कटरा स्टेशन तक ट्रेन पहुंचाकर बेहतर तकनीकी एवं कुशल प्रबन्धन का परिचय दिया हैं। वह अत्यन्त सराहनीय हैं। उत्तराखण्ड में यदि इन पन-बिजली परियोजनाओं को रेबड़ियों की तरह न बाँटा गया होता तो हमारा प्रदेश आज आपदा की वजह से कम और ऊर्जा उत्पादन में अग्रणी राज्य की दृष्टि से अधिक जाना जाता।

Development to whom by whom for whom

- Rahul Jugran

More often than not, most development initiatives are professed to be carried in larger interest of the common man. These include infrastructure of various kinds including transport, health, education, SEZs, small and big hydro projects and dams and the like. However the participation of common man's knowledge and genuine experience in these gets limited to the symbolism of mandatory public participation for seeking clearance of such projects.

In the technological nuances and arithmetic equations combined with the apathetic, shortsighted and indifferent knowledge of technocrats and bureaucrats and the selfish interests of politicians; his voice gets humbled very fast time and again and he gets thrashed with intellectual arrogance of scientists and bureaucrats to the extent that he himself becomes a man of poor self esteem. Thus in the process leaving the macro issues at the mercy of self-styled, self-made knows all of the system.

While on one side it was so heartening to see the Ramon Magsaysay Award awardee for Community Leadership in 1982, followed by the Padma Bhushan in 2005, Shri Chandi Prasad Bhatt being felicitated by the President and recognized for his role in community leadership and environmental issues, the individual well identified in the nation and the whole world; I often feel that the likes of him also loose their voices in the humdrum of calculated arrogant voices at the highest pedestals of decision making.

Perhaps this is the reason that a number of recognized and unrecognized heroes have to ultimately resort to agitations and andolans to first bring the right issues and perspectives to the common masses and then try and oppose the dictums via jan aandolans or PILs in court of law.

Democratic principles and processes, people's participation and transparency are very critical for public awareness, public indulgence and good governance. I think an arrogant top down approach is not sustainable and effective, more so in case of disaster management.

There seems to be quite a gap between the policy makers, experts who make policies and plans and the community that is at the receiving end of the results of all such policies. More often than not the local dimensions, local ecology, socio economic impacts, cultural patterns get lost in the overall perspectives of so called experts from outside. However, when honest and well meaning efforts are made to understand and amalgamate all the local parameters the results are good and sustainable in the long term.

One can say with some degree of empirical evidence and confidence that nothing happened to the holy Ganges for decades and centuries; its nirmalta and aviralta remained absolutely intact in the hands of the common man. However as soon as the indiscrete, illogical things started moving in the name of development lopsided development to be precise, one could witness the

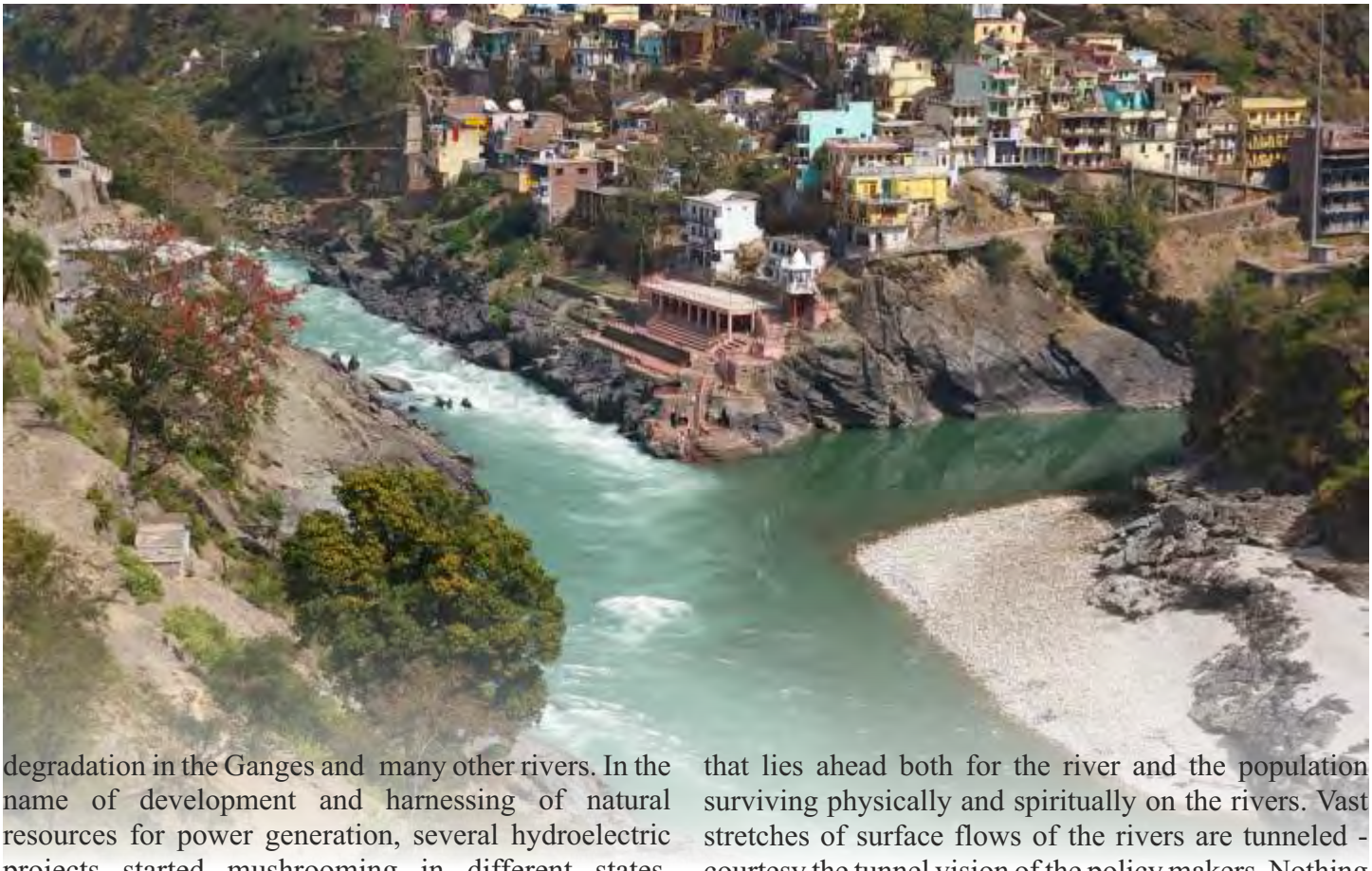

degradation in the Ganges and many other rivers. In the name of development and harnessing of natural resources for power generation, several hydroelectric projects started mushrooming in different states, especially hill states.

At the same time whereas on one side there is so much hue and cry about taking all aspects into consideration - environmental clearances, forest clearances, rehabilitation issues, livelihood issues, socio-economic impact assessments, cultural impacts and the like; it would be amusing to know that the Ministry of Environment and Forest till date has not rejected any proposal. Only delays have been witnessed in some cases. Community participation has been limited to only at the initial stages, no midterm evaluations. EIA is also done at the initial stages, whereas it is required to be done at every stage of the project.

No doubt the aam aadmi is being given the impression and is being lured by the infinite advantages of such projects but it seems that the whole exercise has been done with acute shortsightedness and myopic vision.

With the so defined common and limited vision of a common man, anyone can make out the irreparable damages already done by many such ill conceived and hushed through projects and the damages in store in the name of all such development projects.

Take the case of Bhaghirathi and Alaknanda and a visit upstream would evidently show one the pathetic future that lies ahead both for the river and the population surviving physically and spiritually on the rivers. Vast stretches of surface flows of the rivers are tunneled - courtesy the tunnel vision of the policy makers. Nothing concretely defines the ideal minimum distance between two projects; causing immediate accounted and long term unaccounted irreparable damages to the biodiversity and terrain. Add on to it the loading of rivers with debris of road construction and wastes of towns and cities.

The high profile committee, the expert body, constituted post - June 2013 deluge had also come out with the recommendations with respect to hydroelectric projects in the state that according to many were also responsible for the devastation in the Himalayan tsunami.

The expert body recommends that the hydroelectric projects that fall i) inside wildlife Protected Areas such National Parks and Wildlife Sanctuaries, ii) within the Gangotri Eco-sensitive Zone, iii) above an altitude of 2500 meters that encompass critical wildlife habitats, high biological diversity, movement corridors, and fragile in nature due to unpredictable glacial and paraglacial activities and iv) within 10 km from the boundary of Protected Areas and have not obtained clearance from the National Board for Wildlife, should not be approved for construction.

The expert body has also recommend detailed study of the impacts of hydropower projects in terms of

deforestation, tunneling, blasting and reservoir formation on the hydrogeology of the area. A study on the role of large artificial reservoirs on local climate change and precipitation patterns with special reference to the Tehri dam reservoir has also been recommended.

While the right balance between development and disasters and buzzwords like mainstreaming disaster risk reduction with development would always remain major challenge; the fact remains that several development activities and hydroelectric projects in the hill states do not really cater to long term adverse impacts on ecology, environment and socio-economic issues of the area.

The pace of clearance of all such projects in almost all the hill states has been amazing and obviously this pace cannot ensure a balanced approach to the adverse costs in terms of environmental degradation. On top of this the permission for hydroelectric projects has been extended to almost everyone immaterial of the background and previous experience of the company.

It would be interesting to note the CAG report of 2010 has put it on record that the permission for hydroelectric projects had been given to manufacturers, paan masala firms and garment manufacturers; all purely profit seeking enterprises. While their intentions would have never been above the board, their capability also is altogether more questionable in executing such projects.

Honest approach demands that a comprehensive assessment of all development projects in a holistic manner be made mandatory together with cumulative assessment of the impact of all such projects, running or proposed. The assessments then need to be put in public domain and public participation in the whole process at all the stages needs to be ensured for long term meaningful results. It is only then that the so called sustainable development would be assumed to be alive.

Earth to get hotter despite global warming slowdown

NASA research results published in Nature Climate Change that hinges on a new and more detailed calculation of the sensitivity of earth's climate to the factors that cause it to change, such as greenhouse gas emissions, has warned that the earth's climate would continue to warm during this century on track with previous estimates, despite the recent slowdown in the rate of global warming.

Drew Shindell, a climatologist at NASA's Goddard Institute for Space Studies in New York found that the earth is likely to experience roughly 20 per cent more warming than estimates that were largely based on surface temperature observations during the past 150 years.

Research shows that the global temperatures have increased at a rate of 0.12 degrees celsius per decade since 1951. Since 1998, the rate of warming is however shown to be only 0.05 degrees celsius per decade - even as atmospheric carbon dioxide continues to rise at a rate similar to previous decades. The research suggested Earth may be less sensitive to greenhouse gas increases than previously thought.

To put a number to climate change, researchers calculate what is called earth's transient climate response and this calculation determines how much global temperatures would change as atmospheric carbon dioxide continues to increase at about one per cent per year until the total amount of atmospheric carbon dioxide has doubled. The estimates for transient climate response range around 1.4 degrees celsius as against IPCC's estimate of 1.0 degrees celsius. The study estimates a transient climate response of 1.7 degrees celsius, and determined it is unlikely values will be below 1.3 degrees celsius.

According to the researchers it is necessary to account for the effects of atmospheric aerosols in order to understand the role played by carbon dioxide emissions in global warming. While multiple studies have shown the northern hemisphere plays a stronger role than the southern hemisphere in transient climate change, this has not been included in calculations of the effect of atmospheric aerosols on climate sensitivity.

When corrected, the range of likely warming based on surface temperature observations is in line with earlier estimates, despite the recent slowdown, researchers report. The Fifth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC), issued in 2013, also reduced the lower range of Earth's potential for global warming.

पहाड़ और बारिश

–पीयूष रौतेला

मनोभावों की अभिव्यक्ति के लिये हमारे कवियों और साहित्यकारों ने प्राय: प्रकृति के विभिन्न रूपों का सहारा लिया है। वर्षा, पतझड़ व बसंत..... यह हमारे मन में अलग-अलग भाव उत्पन्न करते हैं। कहीं नवचेतना का संचार होता है तो कहीं एकाकीपन का।

वर्षा को हमारे कृषि प्रधान देश के साहित्यकारों ने किसानों की ही तरह खासा महत्व दिया है। फिर शरीर को झुलसाती गर्मी से राहत देती वर्षा की फुहारें और मिट्टी की सोधी-सोधी सी खुशबू किसे अच्छी नहीं लगती। सावन के झूले, रिमझिम वर्षा में प्रियतम की याद, काली घटायें, बिन बरसे चले जाने वाले मेघ, बिजली का कड़कना; लिखने वाले के लिये यह मौसम अपने आप में किसी खजाने से कम नहीं है।

पर यहाँ पिछले कुछ सालों में स्थितियाँ कुछ बदल सी गयी हैं। न जाने क्यों पर हमने वर्षा को किसी खलनायक की तरह देखना-दिखाना शुरू कर दिया है। हमारे हाव-भावों से, व्यवहार से ऐसा लगने लगा है कि 'अल्लाह मेघ दे, पानी दे.....' कहने वाला हमारा समाज इस सब से बस तौबा करना चाहता है।

यहाँ पर अखबार पलटने पर लगता है जैसे पहाड़ों पर रहने वाले लोगों को वर्षा की आवश्यकता ही नहीं है या फिर वर्षा को वह महज एक परेशानी के रूप में देखते हैं। क्या सच में ऐसा है या फिर हम हर चीज को अपने चश्में से देखने - दिखाने के आदी हो गये हैं।

हमेशा से ही यहाँ पहाड़ की अर्थव्यवस्था खेती पर निर्भर रही है और आज की ही तरह यहाँ की खेती भी पहले से ही वर्षा पर आधारित रही है। समय पर और ठीक-ठाक वर्षा हो गयी तो अच्छी उपज व ऐसा न होने पर खाने के लाले। ऐसे में यह बात हजम नहीं होती है कि पहाड़ में रहने वाला कास्तकार वर्षा के कारण परेशान है। फिर यहाँ पहाड़ में रहने वाला हर व्यक्ति वर्षा के पानी और स्त्रोंतो, धारों, नालों, नौलों से मिलने वाले पानी के मध्य के सम्बन्ध को भी हमसे कई बेहतर तरीके से जानता है। उसे बताने की जरूरत नहीं है कि ठीक-ठाक वर्षा व बर्फ न होने पर गर्मी के आते ही पानी की मारामारी शुरू हो जायेगी। हम चाहे झुठलाने की कितनी भी कोशिश कर लें पर यह सत्य है कि हमारा रिचार्ज जोन व ग्राउन्ड वाटर रिचार्ज का फलसफा उसे अच्छी तरह से मालूम है।

वर्षा की ही तरह यहाँ पहाड़ों में गिरने वाली बर्फ का भी यहाँ की खेती पर सीधा प्रभाव पड़ता है। ज्यादा और लम्बे समय तक बर्फ का सीधा मतलब है कि बागवानी फसलें अच्छी होंगी, पेड़ों में फूल समय पर आयेंगे, पानी ठीक-ठाक रहेगा और पेड़-पौधों पर लगने वाली बिमारियाँ, कीट-पतंगे आदि भी नियंत्रण में रहेंगे।

मुझे नहीं लगता कि आज पहाड़ों में स्थितियाँ मेरे - आपके बचपन के समय से एकदम उलट हो गयी हैं; उनमें कुछ फर्क जरूर हो सकता है। तब हम में; बच्चे, बड़े सभी में, बर्फ को लेकर काफी उत्सुकता व उत्साह होता था। गुड़ के साथ बर्फ, आईसक्रीम बनाने की अधकचरा कोशिश, बर्फ के पुतले और गोले बना कर एक दूसरे को मारना। सच में किसी उत्सव से कम नहीं होता था वो सब। बर्फ-बारिश के कारण महिलाओं को भी आराम और फुर्सत के कुछ पल मिल पाते थे। आज भी कुछ-कुछ ऐसा ही होता होगा।

अब यह भी ठीक है कि वर्षा या बर्फ के कारण पहाड़ी क्षेत्र में कई

Earth to get hotter despite global warming slowdown

Climate change and spread of parasites and diseases

Though hosts might expand their geographical range due to global warming, the parasites do not always follow suit, asserts a study on how climate change affects parasites published in Journal of Biogeography.

The study suggests that perceived fallout from global warming, in terms of the fears of the spread of infectious disease associated with global warming induced range expansions, is not as foregone a conclusion as many may think.

They assert that the invasive species escape parasites for several reasons and many parasites do not come with the invader to begin with - they miss the boat. Many parasites that accompany their invasive host do not persist because the parasites, many of which live part of their life cycle in different hosts, no longer have access to the environments or other hosts required to complete their life cycle. And a species that expands its range by moving into an adjoining area may also escape its parasite.

The researchers studied Kellet's whelk, a large marine snail whose historical biogeographical range starts at mid-Baja California waters in the south to Point Conception in the north. At least for marine parasites such as the ones that live in the Kellet's whelk, the evidence indicates that range expansion for the host does not mean the same for its parasites, the research asserts.

बार यातायात बाधित हो जाता है। इससे निश्चित ही लोगों को परेशानी का सामना करना पड़ता है। लोग कई स्थितियों में स्वास्थ्य व चिकित्सा सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं, कई स्थितियों में यातायात बाधित होने के कारण उनके आवश्यक कामों में व्यवधान उत्पन्न होता है और वह समय पर पूर्वनिर्धारित स्थान पर नहीं पहुँच पाते हैं।

पहाड़ में विशेष रूप से यहाँ के गाँवों में सड़क मार्ग के कुछ समय तक बाधित होने के कारण और परेशानियाँ जो भी हो पर निश्चित ही खाने-पीने की किसी प्रकार की परेशानी उत्पन्न नहीं होती है। अपने अनुभव के आधार पर कम से कम मैं तो यह ही समझता हूँ। अब दूर-दराज क्षेत्रों में रहने वाले लोग यह लोग मेरी-आपकी तरह महीने के महीने पाँच किलो आटा-चावल को खरीद कर लाते नहीं हैं। जहाँ तक मेरी जानकारी है पहाड़ों में अभी भी लोग खाने-पीने के सामान का अच्छी-खासी मात्रा में भण्डारण करते हैं। किसी भी घर में 20-50 किलो आटा-चावल-दाल आज भी सहज ही मिल जायेगी।

ऐसे में सड़क बन्द होते ही उसके आगे के सभी गाँवों को गिन कर यह कह देना कि इतने गाँवों में आवश्क आपूर्तियों की कमी महसूस की जा रही है सर्वथा अनुचित है और इससे भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है। ऐसे में पहाड़ के लोगों की मानसिकता व उनके जीवन-यापन के तरीके को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

अब यह बात और है कि पिछले कुछ समय में जो घटा है उसे लेकर यहाँ हर कोई अपनी खाल बचाने की जुगत में जुटा नजर आता है। बादल घिरने की सम्भावना होते ही मौसम विभाग चेतावनी जारी कर देता है। राज्य में फंला-फंला जनपदों के कुछ स्थानों में भारी या अत्यधिक भारी वर्षा या बर्फवारी की सम्भावना है। अपना बवाल काटने के लिये हम भी राज्य स्तर से जनपदों को सर्तक रहने व एहतियात बरतने के निर्देश दे देते हैं।

अब आपको उत्तरकाशी जनपद में कुछ स्थानों पर जिनका आपकों कोई पता नहीं है भारी बारिश होने की सूचना मिलती है और यह सूचना सच भी हो सकती है। पर एक बार ही सही, जरा सोच कर देखिये कि जनपद में बैठा व्यक्ति इस सूचना के आधार पर करे भी तो क्या? ठीक है जानकारी दी जानी चाहिये; पर उसका इस तरह से हव्वा बना देना भी तो ठीक नहीं है। फिर जो स्थानीय लोग हैं वह अपने क्षेत्र के मौसम के मिजाज को हमसे-आपसे कही बेहतर समझते हैं।

अब ऐसे में कुछ हो गया तो श्रेय लेने के लिये, कि हमने तो पहले ही बता दिया था, हर कोई प्रकट हो जाता है। परन्तु कोई भी यह देखने की कोशिश नहीं करता कि वास्तविकता में बताया क्या गया था और न ही कोई यह समझने का प्रयास करता है कि दी गयी सूचना के आधार पर किया क्या जा सकता था।

घूम-घूम कर सवाल पूछते और पहाड़ की वास्तविकताओं से अनभिज्ञ समाचार माध्यमों के प्रतिनिधियों की तो मौसम की चेतावनी आते ही जैसे मन माँगी मुराद पूरी हो जाती है। उसके बाद वह

अनियंत्रित हो कर कुछ भी कहने को स्वतंत्र हो जाते हैं। खबर निकलते-निकलते हिमस्खलन का बर्फीला तूफान बन जाना यहाँ आम बात है। फिर जब स्थानीय मीडिया ही छाती पीट-पीट कर इस प्रकार की प्रतिक्रिया कर रहा हो तो राष्ट्रीय मीडिया में तिल का ताड़ बनना स्वाभाविक है। उनके पास संसाधन हैं। सड़क बन्द होते ही वह बता देंगे की पहाड़ के कितने गाँवों में आज चूल्हा नहीं जला है। वह लोग शायद यह भूल जाते हैं कि 2013 की आपदा के बाद हमारे इन्हीं गाँवों ने लम्बे समय तक आपदा प्रभावितों को खाना खिलाया था। जब वह इतने लोगों की व्यवस्था कर सकते हैं तो क्या दो-चार दिनों के लिये सड़क बन्द होने की स्थिति में अपने परिवार की व्यवस्था नहीं कर सकते हैं।

यहाँ यह समझना जरूरी है कि इस सबका; जो हमारे मीडिया के मित्र प्राय: लिखते व दिखाते हैं, यहाँ आने वाले लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जब मीडिया चीख-चीख कर कह रहा हो कि यहाँ उत्तराखण्ड में बर्फवारी के कारण जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है तो बाहर रहने वाला कोई क्यों बर्फ का लुफ्त उठाने के लिये औली, दयारा या मुनस्यारी जाने का जोखिम उठायेगा।

ऐसे में जरूरी है कि स्पष्ट परिभाषित किया जाये कि क्या मौसम की जानकारी है और क्या चेतावनी। फिर चेतावनी में कहाँ, क्या और कब का होना जरूरी किया जाये वरना इस प्रकार की चेतावनी की बाद में श्रेय लेने से ज्यादा और कोई प्रासंगिकता नहीं है। ऐसे में आवश्यक यह भी होगा कि चेतावनी देने वाले भी और उस चेतावनी के आधार पर अपना टी.आर.पी. बढ़ाने वाले, दोनों ही पक्षों के लोग इन चेतावनियों के दिनों में पहाड़ में ही रहे और उस अवधि में समझे कि सच में वहाँ रह रहे लोगों की प्रतिक्रिया क्या है, वर्षा किस तरह उनके जीवन पर असर डालती है। यहाँ देहरादून में बैठ कर यदि हम पूर्वानुमान और रिपोटिंग करते रहेंगे तो नतीजे कम से कम पहाड़ के लिये तो अच्छे नहीं होंगे।

Rights based approach for green governance

- Bhavna Karki

Climate change impacts are already becoming evident across the globe in the form of a higher frequency and intensity of natural disasters and depleting livelihood security. It is increasingly clear that the lives and livelihoods of the people are at risk. Mounting pressure of population, degradation of resources, increased emissions and others are already threatening the normal ecological functioning of the planet earth. But in spite of this the earth must provide all living things air, water, food and safer places to live. There is a need to act now in different spheres to restore the ecological functioning and stopping actions that degrade earth; else climate change would rapidly alter the lands and waters we all depend upon for survival. There is a need to bring about the changes in legal and political structures of our governance. We must introduce new ideas for effective and just environmental protection at local, national, regional and global level.

Rights based approach to a clean and healthy environment: India is the largest democracy of the world. Democracy stands for a system in which everyone has equal rights and one can participate in decision making. Article 21 of the Indian Constitution-1950, guarantees the right to life to all persons within the territory of India. It states that no person shall be deprived of his right to life and personal liberty except according to procedure established by law. Right to life has been interpreted by the apex court as also including right to clean air and water. It thus guarantees clean environment. In other words we need to address here the cause of environmental democracy which is about the government being transparent, accountable and involving people in decisions that affect their environment. It is time we bring in green governance in our existing system.

Apart from the Right to life, human rights also signal a public order of human dignity, for which environmental well-being is essential. It can be an effective tool at global level for imagining and securing a system of ecological governance in the common interest. Though there exists skepticism on including cleaner environment in human rights. But human rights clearly include environment as an entitlement derived from recognized rights like Article 21 in context of India. It can well be formulated as a separate right if required and it is also in a way an expansion of existing human rights and duties.

Though it is evident that the people have a right to clean environment but at present the governance in India stills remains trapped in the neoliberal economic system and in liberal or neo liberal capitalism across the globe. This has deprived people of cleaner environment and right to the use of resources in many parts of our country and often the people in these parts bear the brunt of the environmental consequences of the actions taken in some other parts. It is therefore a fear that in the existing

system of governance there would be problems in recognizing right to environment as an autonomous right.

However, the rights based approach can be dealt with in two ways. First, through intergenerational environmental rights of humans, the second approach is the nature's environmental rights as initiated by the governments of Ecuador and Bolivia. Both approaches aim at protecting environment and providing better environment to future generations and require a transition of the governance into green governance.

Transition to green governance: Many actions have already been taken by the government for tackling climate change and for saving environment, e.g. promotion of green technology, exploring renewable sources of energy, cutting emission levels and so on. But there is demand for a more sustainable approach in implementation of the plans. A system of governance is required for implementation and success of the initiatives. This system should be based on respect for nature, interdependence, shared responsibility and equality amongst all. There is also a need to have the understanding of global citizenship because the impact of any activity is not restricted to the particular place but it impacts the earth at global level. Thus the governance should be transparent and accountable in all activities which effect the functioning of earth, positively as well as negatively. The governments across the globe aims at economic growth measured by Gross Domestic Product (GDP), which solely takes into account material, price of human progress i.e. the market activities. There is no accounting of the value of the ecological services. There is no assessment of the carrying capacity of natural systems and limits to their use. For the policy makers anything outside the market process is of no value and any change in this approach has to be initiated at highest level.

Secondly the government has often been involved in controversies relating to decisions favouring major industries in various environment issues. People as such have very little or no participation in the decision making process in these issues. Thus, citizens need more right in decision-making process related to environment.

Transition to green governance would thus involve serious reconsideration of some of the most basic premises of our economic, political and legal orders. The challenge for the government would be to first come up with indicators to measure the value of nature, its services and social well being in economic term in order to expand our understanding from the limitations of existing process in structuring economic activity. This would also require actions beyond the periphery of the mainstream political economy. These include grassroots movements, stronger advocacy in economics and ecological management and rights based approach. Taken together, these would form the new paradigm of green governance. Initial steps required for this could include:

Recognising climate change as an ecological crises resulting from unsustainable practices at cultural, socio-economic and political level.

- Political commitment to green growth pathways and

incorporating people's rights while making decisions.

- Incorporating changes in existing legal and regulatory framework.
- Accounting of natural capital in growth parameters.
- Technological interventions i.e. promotion of renewable technologies.
- Establishment of institutional setup and investment in human capital.

For transition to green governance appropriate changes in the existing policies and processes is required. We must aim at devising new public policies and legal initiatives, and cultivating new understandings of the environment, economics, human rights and governance.

पहाड़ और पलायन

–पीयूष रौतेला

पहाड़ की स्थितियों की थोड़ी बहुत जानकारी रखने वाले किसी भी व्यक्ति से बातचीत करके आपको पता चल जायेगा कि पलायन इस क्षेत्र की प्रमुख समस्या है। जनसंख्या के आंकड़ों पर सरसरी निगाह डालने भर से स्पष्ट हो जाता है कि पहाड़ी क्षेत्रों में, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि की दर बहुत कम रही है। अल्मोड़ा व पौड़ी में तो बीते दशक में जनसंख्या में कमी दर्ज की गयी है।

पलायन के कारणों पर चर्चा करने पर निश्चित ही लोग अलग-अलग तर्क दे सकते हैं परन्तु यह सत्य है कि क्षेत्र में रोजगार की सम्भावना कम होने के कारण पहले से ही यहाँ के लोग, विशेष रूप से पुरूष रोजगार की तलाश में बाहर जाते रहे हैं। फौज की नौकरी यहाँ रोजगार का प्रमुख स्त्रोत रही है। कम उम्र में भर्ती हो जाना और 17-18 साल की नौकरी कर के पेंशन के पट्टे व कैन्टीन के कार्ड से लैस हो कर वापस गाँव आना तब एक आम बात थी। तब नौकरी के लिये बाहर जाने वाले लोगों के माँ, बाप, पत्नी व बच्चे पीछे गाँव में ही रहते थे और खेती के साथ ही हर महीने मनीआर्डर से आने वाले पैसों के भरोसे उनकी ठीक-ठाक गुजर-बसर हो जाती थी।

समय बीतने के साथ इसमें बदलाव आना शुरू हो गया और बाहर रोजगार मिल जाने पर परिवार भी गाँव छोड़ कर साथ जाने लगा। कुछ लोग फौज में क्षेत्र की लगातार कम हो रही भागीदारी को इसके लिये उत्तरदायी मानते हैं पर विस्थापितों से बातचीत करने पर पता चलता है कि बच्चों की शिक्षा इसका एक बड़ा कारण है।

गाँव या क्षेत्र की परिधि से बाहर निकलने के बाद लोगों ने महसूस किया कि शिक्षा ही बदलाव का माध्यम हो सकती है। साथ ही उन्होंने अपने गाँव व शहरों के बीच के शिक्षा के स्तर के अन्तर को भी समझा। ऐसे में अपने बच्चों के भविष्य के लिये उन्होंने सपरिवार पलायन के विकल्प को चुना। आज स्थितियाँ अलग दिखायी दे सकती हैं परन्तु पहली पीढ़ी के विस्थापितों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी, परन्तु परिवार के भविष्य के लिये उन्होंने गाँव छोड़ कर जाने का कठिन निर्णय लिया। धीरे-धीरे एक-एक करके गाँवों के खाली होने का सिलसिला जो एक बार शुरू हुवा आज भी बदस्तूर जारी है।

विस्थापन का असर क्षेत्र की आर्थिकी में स्पष्ट देखा जा सकता है। अब बाहर से पैसा आना भी बन्द हो गया है; जब पीछे कोई है ही नहीं तो पैसा भेजा भी जाये तो किसके लिये? खेत-खलिहान सूने

प्रशासनिक इकाई	क्षेत्र का प्रकार	जनसंख्या (2001)	जनसंख्या (2011)	दशकीय जनसंख्या परिवर्तन (प्रतिशत में)
उत्तराखण्ड	कुल	84,89,349	1,00,86,292	18.8
उत्तराखण्ड	ग्रामीण	63,10,275	70,36,954	11.5
उत्तराखण्ड	शहरी	21,79,074	30,49,338	39.9
उत्तरकाशी	कुल	2,95,013	3,30,086	11.9
उत्तरकाशी	ग्रामीण	2,72,095	3,05,781	12.4
उत्तरकाशी	शहरी	22,918	24,305	6.1
चमोली	कुल	3,70,359	3,91,605	5.7
चमोली	ग्रामीण	3,19,656	3,32,209	3.9
चमोली	शहरी	50,703	59,396	17.1
रूद्रप्रयाग	कुल	2,27,439	2,42,285	6.5
रूद्रप्रयाग	ग्रामीण	2,24,707	2,32,360	3.4
रूद्रप्रयाग	शहरी	2,732	9,925	263.3
टिहरी गढ़वाल	कुल	6,04,747	6,18,931	2.3
टिहरी गढ़वाल	ग्रामीण	5,44,901	5,48,792	0.7
टिहरी गढ़वाल	शहरी	59,846	70,139	17.2
देहरादून	कुल	1,282,143	16,96,694	32.3
देहरादून	ग्रामीण	6,03,401	7,54,753	25.1
देहरादून	शहरी	6,78,742	9,41,941	38.8
पौड़ी गढ़वाल	कुल	6,97,078	6,87,271	**-1.4**
पौड़ी गढ़वाल	ग्रामीण	6,07,203	5,74,568	**-5.4**
पौड़ी गढ़वाल	शहरी	89,875	1,12,703	25.4
पिथौरागढ़	कुल	4,62,289	4,83,439	4.6
पिथौरागढ़	ग्रामीण	4,02,456	4,13,834	2.8
पिथौरागढ़	शहरी	59,833	69,605	16.3
बागेश्वर	कुल	2,49,462	2,59,898	4.2
बागेश्वर	ग्रामीण	2,41,659	2,50,819	3.8
बागेश्वर	शहरी	7,803	9,079	16.4
अल्मोड़ा	कुल	6,30,567	6,22,506	**-1.3**
अल्मोड़ा	ग्रामीण	5,76,062	5,60,192	**-2.8**
अल्मोड़ा	शहरी	54,505	62,314	14.3
चम्पावत	कुल	2,24,542	2,59,648	15.6
चम्पावत	ग्रामीण	1,90,764	2,21,305	16.0
चम्पावत	शहरी	33,778	38,343	13.5
नैनीताल	कुल	7,62,909	9,54,605	25.1
नैनीताल	ग्रामीण	4,93,859	5,82,871	18.0
नैनीताल	शहरी	2,69,050	3,71,734	38.2
उधमसिंह नगर	कुल	12,34,514	16,48,902	33.6
उधमसिंह नगर	ग्रामीण	8,32,600	10,62,142	27.6
उधमसिंह नगर	शहरी	4,03,014	5,86,760	45.6
हरिद्वार	कुल	14,47,187	18,90,422	30.6
हरिद्वार	ग्रामीण	10,00,912	11,97,328	19.6
हरिद्वार	शहरी	4,46,275	6,93,094	55.3

होते जा रहे हैं; जंगल और उसके साथ जंगली जानवर खेतों तक पहुँच गये हैं। नियमित रख-रखाव के अभाव में पानी के स्त्रोत, नौले-धारे सब खत्म होते जा रहे हैं।

ऐसे में यक्ष प्रश्न यह है कि किया जाये तो क्या? किसी को जोर-जबर्दस्ती तो गाँवों में रोका नहीं जा सकता और लगातार कम हो रही जनसंख्या की स्थिति में समय बीतने के साथ सुदूर क्षेत्रों में आवश्यक सेवायें भी उपलब्ध करवा पाना कठिन होता चला जायेगा। यह तो एक ऐसा चक्र है जहाँ पलायन की वजह से सुविधाओं की गुणवत्ता व पहुँच पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और सुविधाओं की यह कमी पलायन को गति देगी। यह अन्डा-मुर्गी की ही तरह है; पहले सुविधायें दी जाये या फिर पहले पलायन रूके। फिर सारी सुविधायें दे पाना अकेले सरकार के बस की बात भी नहीं है। ऐसे में तो क्षेत्र का भविष्य बस अन्धकारमय ही नजर आता है।

खैर सब कुछ इतना अन्धकारमय भी नहीं है; कठिन जरूर है पर विकल्प आज भी उपलब्ध हैं। इतना जरूर है कि उन पर अमल करने के लिये राजनैतिक इच्छाशक्ति व दूरदर्शिता की आवश्यकता होगी। बढ़ रही जनसहभागिता के युग में पहला विकल्प प्रथमदृष्टया अटपटा जरूर लगेगा और यह अनिवार्य विस्थापन से जुड़ा है। अब लोग गाँवों में नहीं रहना चाहते तो न सही पर क्षेत्र में ऐसे स्थान तो खोजे ही जा सकते हैं जहाँ बड़ी आबादी को बसाने के लिये पर्याप्त संसाधन व भूमि उपलब्ध हो। इसके लिये रिमोट सेंसिग व जी.आई.एस. की मदद ली जा सकती है। ऐसे स्थानों पर आवश्यक सुविधायें व आधुनिक अवसंरचनायें विकसित करते हुवे आस-पड़ोस के गाँव वालों को यहाँ भूमि उपलब्ध करवायी जा सकती है। यहाँ पर उनको सहायता देते हुवे पुनर्वासित किया जायें तो ज्यादातर लोग इस विकल्प पर राजी हो ही जायेंगे। साथ ही विस्थापित गाँवों को औपचारिक रूप से गैर आबाद घोषित करते हुवे वन क्षेत्र के अन्तर्गत अधिसूचित कर देना ठीक होगा। ऐसे में इन गाँवों के नाम पर फर्जी योजनायें भी नहीं बन पायेंगी और लोगों की भी वहाँ बने रहने में कोई रूचि नहीं रहेगी। इस विकल्प पर काम करने के लिये निश्चित ही एकमुश्त बड़े निवेश की आवश्यकता होगी पर इसके कई प्रत्यक्ष व परोक्ष लाभ भी होंगे। साथ ही इससे निरन्तरता में होने वाले व्ययों में कमी आयेगी।

आज हम यह सब ज्यादा अच्छे से समझने लगे हैं; आबादी का सीधा मतलब बाजार से है। जब ठीक-ठाक जनसंख्या होगी तो सुविधायें अपने आप विकसित होने लगेंगी। आप माने या न माने पर ऐसे में आज सरकारी सुविधाओं का मुँह ताकते क्षेत्र में प्राइवेट क्लीनिक, अस्पताल और स्कूल खुलने में देर नही लगेगी। फिर लोग होंगे तो प्रैक्टिस, ट्यूशन सब अपने आप चलेगी। साथ ही अच्छे डाक्टर भी होंगे और शिक्षक भी। जब सुविधायें होंगी तो पलायन की दर अपने आप कम होने लगेगी।

अटपटा जरूर लग सकता है पर इससे अवस्थापना विकास और नियमित रख-रखाव व संचालन में होने वाले सरकारी खर्च में भी भारी कटौती होगी। साथ ही इससे पर्यावरणीय क्षति में कमी आयेगी और वन क्षेत्र में वृद्धि होगी।

अब ऐसा भी नहीं है कि यही एक मात्र विकल्प हो। रास्ते और भी खोजे जा सकते हैं। आज यहाँ शहरों में रह रहे पहाड़ के लोगों से बात करने पर एक पक्ष सामने आता है कि आज भी ज्यादातर लोग चाहते हैं कि दूर पहाड़ में उनका आशियाना हो जहाँ वह बच्चों के साथ

छुट्टियाँ मना सकें। काम की आपाधापी बढ़ने और सम्पन्नता आने के साथ ही उनकी यह इच्छा भी बलवती होती जा रही है। ऐसा आशियाना उनके परम्परागत गाँव में हो तो?इस प्रश्न पर लगभग सभी आशा से कहीं ज्यादा उत्साहित नजर आये। ऐसा होना स्वाभाविक भी था। ज्यादातर की ढेर सारी यादें जो जुड़ी हुयी है उन गाँवों से। कईयों ने तो गाँव से जुड़े दशकों पुराने किस्से तक सुना डाले। काफी बड़ी संख्या में लोगों को लगा कि इससे उनकी नई पीढ़ी को अपनी जड़ों से जुड़ने का मौका मिलेगा।

अब कम हो या ज्यादा पहाड़ के हर व्यक्ति की अपने गाँव में कुछ जमीन जरूर है। यह और बात है कि ज्यादातर लोगों ने स्वीकार किया कि उन्होंने गाँव काफी समय से छोड़ रखा है और उन्हें अपनी जमीन के बारे में ज्यादा पता नहीं है। फिर एक खेत यहाँ, दूसरा दूर वहाँ। ऐसे में कोई हिसाब रखे भी तो कैसे और उसका करे भी तो क्या?

इस प्रश्न पर कि यदि उनकी सारी पैत्रिक भूमि एक स्थान पर उपलब्ध करवा दी जाये, सभी अपेक्षा से कही ज्यादा उत्साहित नजर आये। सच में किसी को भी इससे ज्यादा फर्क पड़ता नहीं दिखायी दिया कि यह जमीन उन्हें गाँव में कहाँ पर मिलती है। सभी इस जमीन में नियमित निवेश के लिये भी तैयार दिखे और कईयों ने तो इसका पूरा प्रारूप भी विस्तार से बता दिया। वहाँ पर पेड़-पौधे लगाने के साथ ही एक छोटा पर सुख-सुविधायुक्त घर बनाना लगभग सभी की योजना में सम्मिलित था। कुछ नियमित देखरेख के लिये आदमी रखने को भी तैयार नजर आये।

जरा सोचिये कि यदि इनमें से आधे लोग भी पहाड़ के अपने गाँव में निवेश करते हैं तो कितना बढ़ा निवेश होगा वह और उससे क्षेत्र की अर्थ व्यवस्था को कितना बल मिलेगा? साथ ही आप यह भी मानेंगे कि यह विकल्प बहुत ज्यादा कठिन भी नहीं है। इसके लिये बस थोड़ी सी राजनैतिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता जरूर है।

वैसे तो इस सब के लिये चकबन्दी के नियम-कानून तो है पर ज्यादातर स्थितियों में वह अब तक सरकारी फाइलों की धूल फाँक रहे हैं। ऐसे में यदि धूल साफ कर अनिवार्य चकबन्दी की दिशा में ठोस कार्यवाही की जाये और योजना के प्रचार-प्रसार पर पर्याप्त ध्यान दिया जाये तो हालात बदलने में देर नहीं लगेगी।

इससे पलायन एकदम से तो नहीं रूकेगा पर गाँवों में निवेश होने से वहाँ रोजगार के अवसर पैदा होंगे। जो पीछे छूट गये हैं उनका जीवन स्तर सुधरेगा। जो लम्बे समय से गाँव को भुलाये बैठे हैं, वो गाँव की सुध लेंगे। नई पीढ़ी को अपनी जड़ों से जुड़ने का अवसर मिलेगा। धीरे-धीरे ही सही पर शायद कुछ वापस लौटने के विकल्प पर भी विचार करने लगें।

अब यह कुछ विकल्प अवश्य हैं निश्चित ही यह अंतिम नहीं है। कई और इससे कहीं ज्यादा अच्छे विकल्प आपके पास हो सकते हैं और मिल कर पहाड़ की बदहाल तस्वीर को बदलने के लिये हम निश्चित ही एक स्वीकार्य व अच्छा विकल्प सामने रख सकते हैं।

Your going vegetarian might help save water

Researchers believe that eating less meat would protect water resources in dry areas around the world. Reducing the use of animal products can have a considerable impact on areas suffering scarce water resources, as meat production requires more water than other agricultural products, asserts the research findings published in Environmental Research Letters.

The researchers assessed the impact of diet change on global water resources over four scenarios, where the meat consumption was gradually reduced while diet recommendations in terms of energy supply, proteins and fat were followed.

The lead author Mika Jalava from Aalto University in Finland adds that by reducing the animal product contribution in the diet, global green water (rainwater) consumption decreases up to 21 percent while for blue water (irrigation water) the reductions would be up to 14 percent. In other words, it is possible to secure adequate food supply for an additional 1.8 billion people without increasing the use of water resources by shifting to vegetarian diet.

According to the United Nations, global population is expected to exceed 9 billion by 2050, adding over 2 billion mouths to be fed to the current population. In this backdrop the researchers asserted that the diet change together with other actions, such as reduction of food losses and waste, may tackle the future challenges of food security.

Dehradun the changing face of a city

- Sweta Rawat

Dehradun of early 20th century was a calm and quiet town where each home would boast of a litchi tree, where the old and the young would come out feeling safe for a walk on the roads in the shade of trees. A few prestigious institutions were and still are the shining badges on the shoulders of this town, which is known far and wide for its beautiful climate and of course for its proximity to Mussoorie. These attributes that have always attracted people from other parts of the country have resulted in the rapid expansion of the city and the population explosion. Within last decade many private educational institutes, big shopping malls and multi-storey housing colonies have sprung up. The beautiful town has thus metamorphosed into a buzzing city with roads congested with vehicles and the air polluted with vehicular emissions. Dehradun, today, is the fastest growing city not just in Uttarakhand but also in the entire Himalayan belt of India. The built-up area has encroached into hitherto agricultural and forest lands.

This rapid transformation is attributable to Dehradun being accorded the status of the interim capital of Uttarakhand a state carved out in the year 2000. This single incident has put the development of this city into an entirely different trajectory. The first visible impact was an unheard-of rise in property rates and the dominance of bhu-mafia, a tribe of realty estate dealers who connived to inflate the prices. People from all parts of the new state and also from the neighbouring cities of its parent state Uttar Pradesh began settling here. The population of Dehradun district rose by 32.33 percent from 12,82,143 in 2001 to 16,96,694 in 2011 census. The population of the urban agglomerate Dehradun is 7,14,233, whereas in 2001 it was 5,60,120.

Urban growth: The urban built-up area of Dehradun is expanding whereas the green spaces and the forest cover are on a declining trend. According to a paper by Sadhana Jain and her colleagues in International Journal of Advanced Remote Sensing and GIS in 2013, the pattern of urban growth in Dehradun is influence of the topography and socio-economic structure of people. Here, urban growth includes extension of residential, commercial services, industrial, transportation, communications activities resulting in the expansion of built-up area. Classified satellite images of three different times shows how the pattern of urban landscape has changed during 1986 1998- 2011. The

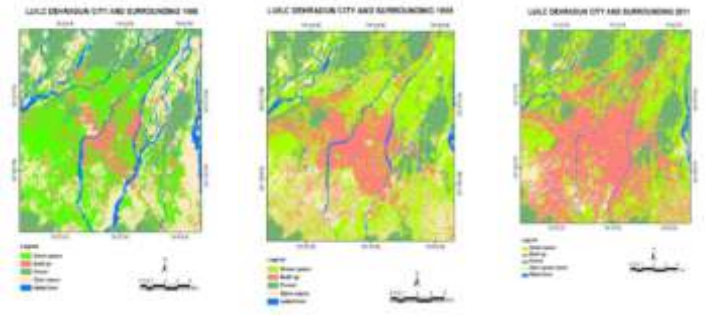

built-up area in Dehradun and surroundings was 2837.60 hectares, which was 12.83 percent of the study area in the year 1986. It increased to 4337.58 hectares (19.61 percent) in 1998 and to 8244.90 hectares (37.27 percent) in 2011.

The authors thus established that in the previous two decades, built-up area has increased by more than three fold. Most of the developments have taken place on open spaces, and it has shown maximum decrease (4367 hectares) in the previous two decades i.e. 1986-2011. It is also supported by growth rate as built-up increased with a rate of 4.27 percent; open spaces decreased with a rate of - 5.00 percent. The growth rate of built-up was observed to be higher during 1998-2011 in comparison to 1986-1998. Dehradun became the capital of newly formed state of Uttrakhand in the year 2000 and this is attributed to be the major reason for the high growth rate during 1998-2011 apart from the natural growth and rural-urban migration. The extent of built-up has increased with the compactness in the city center. It is contributing significantly in the environmental condition deterioration as well as urban heat island."

The analysis of data by Sadhana Jain and her colleaguesfurther reveals reduction in the river-bed area indicating illegal encroachment. The authors observe that the river-bed during previous two decades has reduced by 955.94 hectares, which is about 4 percent of the study area. This is attributed to encroachment on the river-bed, most of which are asserted to be un-authorized developments. It results in the problems of destruction of natural landscape, inadequate open spaces, environmental degradation and lack of

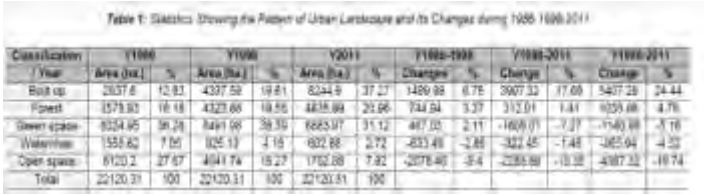

appropriate amenities. The rate of encroachments in river bed is observed to be higher during 1986- 1998 as compared to 1998-2011. It causes a decrease in the area under riverbeds with a rate of 2.86 percent during 1986-1998 and 1.46 percent during 1998-2011."

Moreover, the people, in their desire to have more space for themselves, do not adhere to the building byelaws. Hoping to take advantage of compounding prescribed setback is not left and building height related restrictions are often flouted. Most houses in Dehradun are constructed in this manner. Besides enhancing vulnerability of built environment and leading to congestion this enhances pressure on other services. These are some of the issues, which are plaguing the rapidly urbanising city of Dehradun.

Industrialisation: Industrialisation was slow paced till 2003, when the state government launched its new industrial policy for Uttarakhand, luring the top companies of the nation with excise duty cuts, tax relief and subsidized power. The decade following it saw the rise of peripheral industrial towns in Dehradun. Selaqui pharma city is growing as one such industrial hub, another being the IT Park at Sahastradhara.

One of the impacts of urbanisation and industrialisation is on the reduction in the agricultural production. Basmati the famous variety of rice grown in Dun valley is bearing the brunt of this change. Moreover, use of fertilisers and hybridisation has dented the quality of Dun's basmati.

Traffic: The pollution free roads of Dehradun, where people used to stroll in the evenings,have been widened for accommodating the increased traffic, regardless of that the stream of vehicles is only growing at a faster pace.

According to RTO Office, Dehradun the number of annual registered vehicles in Dehradun district have increased by 295percent; from 17889 in the year 2001-02 to 52711 in the year 2012-13. The number of on-road vehicles in the district has however increased by 320 percent from 191241in 2001-02 to 612568 in 2013-13.

This clearly indicates that apart from the increase in new vehicles, vehicles registered at other places are also plying on the city roads. Moreover, the roads have not been planned keeping in mind the safety of bicycle riders and pedestrians.

Air Pollution: The air pollution in the city has increased to a point where it has found its place in the list of 25 most polluted cities in the country. The 2014-version of the Ambient Air Pollution Database released by WHO in May this year surprised everyone by putting the PM 2.5 concentrations in Dehradun at 77 microgram per cubic metre (µg /m3) and the PM 10 concentrations at 175 µg /m3, much higher than the safe air quality guidelines of WHO.

Particulate matter	PM2.5: 10 µg/m^3annual mean and 25 µg/m^3 24-hour mean PM10: 20 µg/m^3annual mean and 50 µg/m^3 24-hour mean
Ozone	O_3: 100 µg/$m^3$8-hour mean
Nitrogen dioxide	NO_2: 40 µg/m^3 annual mean and 200 µg/m^3 1-hour mean
Sulfur dioxide	SO_2: 20 µg/$m^3$24-hour mean and 500 µg/m^3 10-minute mean

This pollution related scenario has become a major health hazard in Dehradun. A 2013 assessment by WHO's International Agency for Research on Cancer (IARC) has concluded that outdoor air pollution is carcinogenic to humans, with the particulate matter component of air pollution most closely associated with increased cancer incidence, especially cancer of the lung. An association also has been observed between outdoor air pollution and increase in cancer of the urinary tract/bladder.

Ambient outdoor air pollution in both cities and rural areas is estimated to cause 3.7 million premature deaths every year worldwide; this mortality is due to exposure to small particulate matter of 10 microns or less in diameter (PM10), which cause cardiovascular and respiratory disease and cancers.

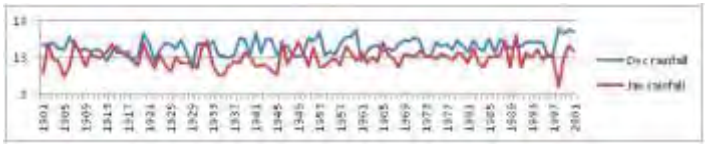

Change in meteorological parameters: There is hardly any observable change in the rainfall data of the past 100 years. Though, an uncertainty in the occurrence of rainfall has been observed. The frequency and intensity of hydro-meteorological hazards is affected by change in climate. Certainly there is a dearth of studies and data on climate change at the city level.

However, a slight rise in the average temperate has been observed, which can be attributed to anthropogenic activities. A study on rising temperature trends in Dun valley by Omvir Singh and his colleagues published in Journal of Earth System Science in 2013 notes the decadal rise in annual mean temperature to be 0.12o C which is higher than the global average. Annual maximum, minimum and mean temperatures at Dehradun city are thus deduced to show positive trends

of change. Warming is thus observed to be significant and annual mean temperature has increased about 0.47oC during the 41-year period (19672007).

This alarming rise in temperature is attributed by the authors to the process of industrialization, urbanization, land use/land cover changes, construction activities, expansion of built-up areas, construction of roads and pavements, mining activities and the like, which were initiated in Dehradun city during second phase (19882007). In case the temperature of Dehradun city continues to increase at the same rate, then by the end of this century temperature could rise by 1.2oC, the study warns. This level of climatic warming could result into fatal effects on natural ecosystems. One of the obvious effects of temperature increase may lead to change in hydrological cycle and decrease in agricultural productivity in Doon valley.

Health: It is generally understood that urbanisation and climate change have an impact on human health. These include increase in respiratory diseases due to air pollution, incidences of malaria and other vector borne diseases.

Water: An impact assessment of urbanization and industrialization on surface and groundwater quality conducted by the Wadia Institute of Himalayan Geology and University of Petroleum and Energy Studies reveals deterioration in surface and groundwater quality in the urban areas of Dun valley. According to another study conducted jointly by the Uttarakhand Irrigation Department and MDDA, there were 6542 encroachments on the Rispana River and 4266 in Bindal River.

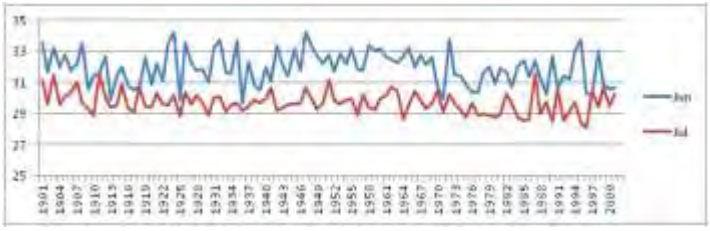

In Dehradun, onset of monsoons brings with it the stress of water logging in various localities and at important points, like ISBT and Survey Chowk. Moreover Ashima Vihar in Turner Road, Maharana Pratapmarg, Majra, PreetVihar, Chaudhary Enclave, and Azad Coloney in Mazra, HariKunj in GMS Road, Old Salawala and Bhud are identified as being chronically prone to water logging. In many areas repeated paving of road has rendered houses at lower elevation that the road. Together with this closure of canals that used to serve as storm water drains has complicated the waterlogging related problem.

This city requires proper planning keeping in view the pressures related to population and urbanisation 20 years from now. A special focus has to be laid upon the building bye laws and their proper adherence. Land use planning must ensure that the agricultural land does not get engulfed by the human habitation.

In view of the fact that Dehradun is the sink for the mountains of Uttarakhand, people would migrate to the city. The focus should therefore be on developing multi-storeyed and affordable housing. After all, with increase in population in years to comevertical expansion would be the only option. So, why not plan ahead.

जान बची तो लाखों पाये, यह बात बस कलवा को भाये.....

–गोविन्द रौतेला

हर आदमी का अपना-अपना दुखड़ा है। किसी को घर-बार की टेंशन है तो किसी को ऑफिस के पचड़ों की। कुल मिला कर यह कि इस मृत्युलोक में हर आदमी नाना प्रकार के दु:खों से पीड़ित है। अब कलवा को ही ले लीजिये; बेचारे के ख़्वाब कभी भी हकीकत में तब्दील नहीं हो पाते हैं; कम से कम अब तक तो यही होता आया है। चकित कर देने वाली बात यह है कि इतना सब होने के बाद भी वह उम्मीद का दामन छोड़ने को तैयार नहीं है।

वैसे वह अच्छी तरह से वाकिफ है कि जिसे जो मिलना चाहिये उसे वह न देना हमारी सुशासन की नीति का एक महत्वपूर्ण अंग है। नौकरी-चाकरी में पोस्टिंग से लेकर मनचाही ट्रेंनिंग तक सभी जगह इस नीति का पूरी शिद्दत से पालन किया जाता है। इस बात का पूरा खयाल रखा जाता है कि गलती से भी आपको किसी प्रकार की कोई सुविधा न मिल पाये। हद तो तब हो जाती है जब सब कुछ जानते हुये भी आपकी दुखती रग को छेड़ने के लिये जबरदस्ती आपकी मर्जी पूछी जाती है और बाद में यह सुनिश्चित किया जाता है कि वहीं चीज आपको न दी जाये।

अच्छा बताओं कलवा..... तुम कौन सी ट्रेंनिग में जाना चाहोगे?..... नैनीताल, अल्मोड़ा या फिर उधमसिंहनगर.....? माईबाप, मैं भवाली से हूँ..... मेरे लिये नैनीताल ज्यादा ठीक रहेगा, क्योंकि ट्रेनिंग के बाद शाम को घर भी चला जाऊंगा और मां-बाप से भेंट भी हो जायेगी। अगर आपने ऐसा कह कर अपनी मंशा बता दी, तो मान कर चलिये कि आपका नैनीताल जाना तो दूर रहा..... आप नजीबाबाद तक भी फटक नहीं पायेंगे.....। हाँ, यदि आपने अपनी कचकचाहट बदस्तूर जारी रखी तो मन मसोस कर आपको माणा या नीति अवश्य भेज दिया जायेगा जहाँ दूर-दूर तक रिश्तेदारी तो क्या..... आप मन मुताबिक खाने के लिये भी तरस जायेंगे।

सुशासन की नीतियों के तहत शायद ऐसा करना इसलिये भी जरूरी हो जाता है ताकि कर्तव्यनिष्ठ, लगनशील और ईमानदार कार्मिक के दिमाँग में पारिवारिक जिम्मेदारियों का कीड़ा ज्यादा न कुलबुलाये और वह कोल्हू के बैल की तरह अपना पूरा ध्यान सिर्फ और सिर्फ काम पर लगा सके।

इतना ही नहीं यदि आप बाल-बच्चे वाले हैं तो यह भी सुनिश्चित किया जायेगा कि आपको देर-सबेर ही घर जाने का अवसर मिल पाये और वह भी शायद इसलिये कि बच्चों व पड़ोसियों को आपके होने का एहसास होता रहे। कई सालों से चाकू की धार पर नौकरी कर रहे कलवा ने जब बड़े मान-मनुहार के बाद घर जाने और इंसान बन कर समाज की मुख्यधारा में शामिल होने की कोशिश भर की तो उसे इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी। घर पहुँचने पर जो मंजर सामने आया वह भुलाये नहीं भूलता..... किसी मैन्टल ट्रामॉ तरह.....।

बीबी घर पर थी नहीं..... बीबी को सरप्राईज करने के चक्कर में जब बच्चों ने कलवा को पिछले दरवाजे से घर में घुसते देखा तो उन्होंने जोर-जोर से चोर-चोर चिल्लाना शुरू कर दिया। आवाज सुनकर पड़ोसी भी आ धमके और बिना ज्यादा कुछ सोचे-समझे, सीधे कलवा पर पिल पड़े। पहले ही 32 दाँतों में से मात्र 17 ही बचे थे; उनमें से भी 03 मौका-ए-वारदात पर शहीद हो गये। अब कलवा अपना बीच-बचाव करता भी तो कैसे..... मुँह और हाथ दोनों ही लाल थे। शायद अभी इतना काफी नहीं था। पता नहीं कहाँ से और कैसे, पर भले मानुष कालिख और जूते-चप्पलों का हार भी ले आये..... .....। अच्छे नागरिक का फर्ज अदा करते हुवे कुछ समाज सेवियों ने मित्र पुलिस को भी फोन करने में जरा सी देरी भी नहीं की। वो तो अच्छा हुआ कि आदत से मजबूर पुलिस समय पर पहुँची ही नहीं। शायद कलवा के भाग्य में लगड़-झगड़ कर जीना अभी बाकी था.....।

घर पर मच रहे शोर-शराबे को सुन कर कलवा की पत्नी भी आखिर आ ही गई.....बामुश्किल कलवा की जान में जान आयी। इससे कुछ और हुवा हो या न हुवा हो पर कलवा को महिला शक्ति का महत्व अवश्य ही समझ में आ गया।

जान बची तो लाखों पाये को सर्वोपरि मान कर कलवा ने वही पुराने

ढर्रे पर ड्यूटी करना मुनासिब समझा और सुशासन की मुख्यधारा में लौट कर आदरणीय महोदय से इंसान बनने के अपने बागी तेवरों के लिये क्षमा याचना की। कलवा की हालत पर तरस खाकर गरीब परवर महोदय ने उसे माँफ कर दिया और रूधे गले से नसीहत देते हुये कहा, बेटा कलवा, घर-बार का क्षणभंगुर मोह छोड़ो..... बस अपना नाता ऑफिस से जोड़ों..... इसी से परमानेन्ट होने तक जिन्दा रह पाओगे तुम.....औरों की देखा-देखी के पीछे मत दौड़ों.....वो मक्कार हैं, तो क्या हुआ, उनका ध्यान छोड़ों.....तुम कर्तव्यनिष्ठ.... तुम ईमानदार..... ये जानता हूँ मैं.....तुम घर-बार की मत सोचो, बस ऑफिस से नाता जोड़ों.....।

कलवा को महोदय के मुखश्री से निकले दोहे रास आ गये और वह उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। अब आप ही बतलाइयें सच है ना .....जान बची तो लाखों पाये..... ये बात बस कलवा को भाये....। अत: आप भी जिस ढर्रे पर चल रहे हैं उस पर बने रहे अन्यथा आपका हाल भी कलवा की तरह हो सकता है।

Geological investigation of widespread heavy rainfall in Himalaya, a case study of 2014 rainfall

-K. S. Sajwan

Cloudburst is a natural phenomenon that generally occurs during monsoon period over many regions of Himalaya.Generally speaking cloudburst refers to particularly heavy precipitation in a short period of time over limited geographical area. It is often defined as more than 100mm/hour rainfall within a limited geographical area of a few square kilometres.Due to heavy downpour these are often associated with sudden increase in the discharge of streams and rivers that is designated flash flood.

Cloudburst incidences over many areas of Himalaya often go unnoticed due to the absence of meteorological observatories. Many a times these come to notice only when these are accompanied by losses and casualties. In the absence of losses these can only be identified on the basis of inundation occurring along streams. On the basis of information collected from the local people, strong winds and lightning are very common during cloudburst.

Locations of 22 cloudbursts incidences in Rudraprayag district and 15 in Chamoli district were identified during the fieldwork carried out recently. Analysis of these locations suggests that these have distinct geomorphological and geological control. Cirque and funnel shaped narrow valleys with steep slope are observed to be favourable for inducing cloudburst. Forest and cultivated land on uphill and downhill side respectively, as also topographic relief ranging between 1,200 and 2,200 meters have been found suitable for cloudburst events. Small tributary streams have been observed to be overwhelmed by debris flow during these incidences. Slope failure and bank erosion have also been common.

On 16th August 2014 heavy rains devastated many areas of Uttarakhand and in these incidences as many as 17 human lives were lost. Pauri, Dehradun and Pithoragarh districts were the worst affected from where landslides along with collapse of houses was reported. Of these 07 including four of a family were killed after heavy rains triggered a landslide in Rajpur area of Dehradun.

Heavy overnight rains caused water level of Jakhan, Bindal and Rispana rivers to rise unexpectedly and water entered and damaged a number of houses along their banks. The damage and devastation was however not restricted to Dehradun. Chandrabhaga river at Rishikesh was flowing above the danger level and its waters had completely overwhelmed the flood plain. Rishikesh-Badrinath National Highway (NH-58) was blocked at several locations due to land slips between Devprayag to Shivpuri. Pantgaon, Teen Dhara and Shivpuri are some locations that were damaged. Devastation was near total for a hotel at Teen Dhara and inappropriate choice for siting the same along the course of a dry nala was responsible for the damage.

On 15th and 16th August, 2014 Dehradun received 120.4 mm and 135.5 mm rainfall respectively. It was this rainfall that led to massive surge in the rivers around Dehradun. The scenario in case of rainfall of 90-100 mm per hour which is defined as cloudburst can well be imagined. The topographically more rugged and dissected hilly terrain of Lesser and Higher Himalaya are all the more vulnerable in such a scenario in contrast to Siwalik hills around Dehradun. On 16th and 17th June 2013 Rudraprayag had received 104.7mm and 108.2 mm rainfall respectively.

In Pinder valley it was observed that apart from major tributaries, small streams and nalas had caused major devastation. According to the locals torrential rainfall in August 2014 caused devastation along six seasonal streams between Silingi (Langari Gram Sabha)and Rain villages. Rills and gullies were observed to have carved out along the stream channels and strong and massive flow of debris had devastated everything in its vicinity,

including settlements and agricultural land. In Rain village a temple located just upslope of the village was also damaged by the debris flow while at Ghat a number of buildings near the Tehsil were observed to have buried under the debris.

Observations in Rudraprayag district were no different. Had the bed rocks been exposed less of debris would have generated but the presence of unconsolidated material consisting of old landslide debris and alluvial terraces together with structurally weak zones resulted in abundant supply of debris.Downslope movement of debris was the main cause of devastation in all the previous cloudburst incidences in the district that include Bheti-Paundar (August, 1998), Phata (July, 2001), Okhimath (September, 2012) in Rudraprayag district. Same was the case in ***Khirao Ganga (June, 2013) and Bhundar Ganga (June, 2013) in Chamoli district***.

Main Central Thrust (MCT) and Main Boundary Thrust (MBT) are two major structural discontinuities of Himalaya that traverse through central and southern portion of the state respectively in northwest southeast direction. Besides these, there also exist a number of local or regional weak planes. Rock mass in the vicinity of these is structurally weak and therefore these zones are identified as being highly vulnerable to mass wastage. Saturated debris together with fractured, jointed and sheared rocks on the hill slopes are easily displaced by moving water and gravity keeps them moving down.

Khiron Ganga, Bhundhar Ganga and Mandakini are important tributaries of Alaknanda river originating from Higher Himalayan Crystalline. Slopes along the banks of these rivers often comprising of unconsolidated glacial and glacio-fluvial sediments are highly vulnerable to slope failure. Widespread heavy rainfall in these valleys and resulting mass movements in 2013 have reshaped the geomorphic set up in many areas.

Due to anthropogenic activities related to the construction of roads, buildings and hydropower projects have contributed to the instability of hill slopes. Infrastructure development related initiatives are also often accompanied by large scale felling. Moreover settlements in close proximity of drainage aggravate the losses. As compared to Okhimath area of Rudraprayag district there was relatively less damage in Silingi (Langari Gram Sabha) area of Chamoli district as the settlements out there were fairly distant from the streams.

Even though there were many other factors that were also responsible for the damage and destruction, construction in the proximity of streams needs to be restricted and regulated. Ensuring proper drainage of rainwater and avoiding construction in the proximity of drainage lines can at least prevent losses even if incidences of bank erosion and slopes moving down are not totally avoided. People have to be educated that settlement and construction near old landslide zones, along abandoned and dry channels and in floodplains is dangerous. Flood plain is the demarcation created by the rivers and it can recuperate these anytime without warning. Moreover financial institutions should at the same time avoid financing any venture in the proximity of streams and rivers.

Ocean circulation a major factor in climate change

Research results of Stella Woodard and others from Rutgers University in the US published in Science show that apart from the atmosphere, the circulation of the oceans plays an equally important role in regulating the earth's climate.

The study revealed that the cooling of earth and continental ice build-up in the northern hemisphere 2.7 million years ago coincided with a shift in the circulation of the ocean - which pulls in heat and carbon dioxide in the Atlantic and moves them through the deep ocean from north to south until it's released in the Pacific.

The study shows that the ocean conveyor system changed at the same time as a major expansion in the volume of the glaciers in the northern hemisphere took place along with a substantial fall in sea levels. It was the Antarctic ice, researchers argued, that cut off heat exchange at the ocean's surface and forced it into deep water. This led to global climate change at the time and it could be said that the formation of the ocean conveyor cooled the earth and created the climate we live in now.

The researchers argue that it was the establishment of the modern deep ocean circulation - the ocean conveyor - about 2.7 million years ago, and not a major change in carbon dioxide concentration in the atmosphere that triggered an expansion of the ice sheets in the northern hemisphere.

The new findings, based on ocean sediment core samples between 2.5 million to 3.3 million years old, provide scientists with a deeper understanding of the mechanisms of climate change today. The changes in heat distribution between the ocean basins is important for understanding future climate change, the research concludes.

पहाड़ और डाक्टर

–पीयूष रौतेला

यहाँ उत्तरखण्ड में भौगोलिक परिस्थितियाँ निशिचित ही विषम हैं जिसके कारण काफी कम दूरी तय करने में भी अक्सर लम्बा समय लग जाता है। यह समय अनेकों परिस्थितियों में घायल और बीमार व्यक्तियों के लिये जानलेवा सिद्ध होता है। ऐसे में जरूरी हो जाता है कि चिकित्सकीय सुविधायें दूर-दराज क्षेत्रों में रहने वाले लोगों तक पहुँचायी जायें। सरकार के स्तर से निश्चित ही इस दिशा में काम किया गया है; नये अस्पताल व स्वास्थ्य केन्द्र खोले गये हैं और साथ ही 108 की सेवा भी तो उपलब्ध करवायी गयी है। यह अलग बात है कि इन चिकित्सालयों में डॉक्टर नहीं है और 108 सेवा गर्व के साथ आँकड़े पेश करती है कि उसके द्वारा चिकित्सा वाहनों में रिकार्ड प्रसव करवाये गये हैं।

पता नहीं हमें इन आँकड़ों पर गर्व करना चाहिये या नहीं?अब चिकित्सा वाहन प्रसव के लिये तो बने नहीं हैं। इनका काम तो मरीजों या घायलों को चिकित्सालय तक पहुचाने का है। ठीक है ऐसे में कुछ प्रसव इन वाहनों में हो सकते हैं परन्तु यदि ऐसा बड़ी तादात में हो रहा है तो स्पष्ट है कि बड़ी तादात में लोगों के पास-पड़ोस में कोई अन्य संतोषजनक विकल्प उपलब्ध नहीं हैं। क्या हम इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर इसके निदान करने पर विचार कर रहे हैं या फिर अभी भी हम आत्ममुग्ध हो कर इन आँकड़ों पर तालियाँ बजाने में व्यस्त है?

अब दूर-दराज और कम सुविधाओं वाले क्षेत्र केवल हमारे यहीं तो हैं नहीं; ऐसे इलाके दुनिया भर में हर देश में हैं पर वहाँ उनके द्वारा केवल दुर्गम कह कर समस्या से किनारा नहीं किया जाता है।

अब समस्या है तो उसका समाधान भी अवश्य ही होगा। जरूरत है तो समस्या की जड़ तक जाने की और समाधान के लिये उपलब्ध विकल्पों में से उपयुक्त को चुनने और उन पर अमल करने की।

कमी डॉक्टरों की हो या शिक्षकों की, हमें स्थानीय जन-समुदाय की क्षमताओं के विकास पर समुचित ध्यान देना होगा और शायद यही इस समस्या का सबसे प्रभावी समाधान भी है। आखिर हमारे इस दुर्गम क्षेत्र में सेवा करने के लिये कोई दूसरे प्रदेश या देश से तो आने से रहा और यदि आ भी गया तो वह नौकरी के पहले दिन से ही अपना तबादला सुविधाजनक स्थान पर कराने की जुगत में लग जायेगा।

अब हमें डॉक्टरों की जरूरत है तो हमें अपने बीच डॉक्टर पैदा करने होंगे। ऐसा बिना संसाधनों के तो होने से रहा और फिर मेडिकल कॉलेज की स्थापना के लिये जिस तहर के संसाधन चाहिये उन्हें जुटा पाना निजी क्षेत्र में हर किसी के लिये सम्भव नहीं है। और फिर निजी क्षेत्र का कोई कॉलेज केवल समाज सेवा के लिये स्थानीय विद्यार्थियों को दाखिला देने से रहा। वह तो अपनी अन्तिम सीट तक को नीलाम कर के अपने निवेश पर सर्वाधिक लाभ उठाना चाहेगा। अब करोड़ों खर्च कर के डॉक्टर बने किसी व्यक्ति से समाज सेवा के लिये दूर पहाड़ में 40-50 हजार की नौकरी के लिये तैयार हो जाने की अपेक्षा करना भी तो ठीक नहीं है।

ऐसे में पहल तो सरकार को ही करनी होगी आखिर डॉक्टर चाहिये तो डॉक्टर तैयार करने के लिये मेडिकल कॉलेज तो खोलने ही होंगे। इससे सरल कोई और विकल्प, कम से कम मुझे तो नजर नहीं आता है। साथ ही इन कॉलेजों में स्थानीय विद्यार्थियों को प्राथमिकता के

Climate change warming groundwater

Groundwater has not escaped climate change, according to a new study published in Hydrology and Earth System Sciences that found groundwater's temperature profiles echo those of the atmosphere.

Researchers led by Peter Bayer of ETH Zurich's Geological Institute in Switzerland used long-term temperature measurements of groundwater flows around the cities of Cologne and Karlsruhe, where the operators of the local waterworks have been measuring the temperature of the groundwater, which is largely uninfluenced by humans, for 40 years.

Based on the readings, the researchers demonstrate that the groundwater is not just warming up; the warming stages observed in the atmosphere are also echoed. Global warming is thus reflected directly in the groundwater, albeit damped and with a certain time lag.

The data also shows that the groundwater close to the surface down to a depth of around sixty metres has warmed up statistically significantly in the course of global warming over the last 40 years. This water heating follows the warming pattern of the local and regional climate, which in turn mirrors that of global warming.

The groundwater shows how the atmosphere has made several temperature leaps at irregular intervals. These "regime shifts" can also be observed in the global climate.

The Earth's atmosphere has warmed up by an average of 0.13 degrees per decade in the previous 50 years. And this warming doesn't stop at the subsoil, either, as other climate scientists have demonstrated in the last two decades with drillings all over the world.

However, the researchers only tended to consider soils that did not contain any water or where there were no groundwater flows.

आधार पर दाखिला दे कर उन्हें रियायती दर पर पढ़ाना होगा। फिर उन्हें नियत अवधि तक यहाँ अपनी सेवायें देने के लिये सख्त कायदे-कानून बनाने होंगे।

इच्छा शक्ति होने पर पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद एक नियत अवधि तक पहाड़ में सेवा के बाद मेडिकल की डिग्री दिये जाने का प्राविधान करके ऐसा सहज ही किया जा सकता है। जब डिग्री ही हाथ में नहीं होगी तो यहाँ काम करने के अलावा कोई और विकल्प भी नही होगा। केवल कुछ लाख का बौन्ड भरवा कर पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद यहाँ काम करने को तैयार होने की अपेक्षा करना आज के समय में सच में अव्यवहारिक है।

ऐसे में हो सकता है कि बहुत ज्यादा व्यक्ति हमारे इन सरकारी मेडिकल कॉलेजों का रूख ही न करें पर तब जो यहाँ दाखिला लेगा पहले ही दिन से यहाँ काम करने को मानसिक रूप से तैयार होगा। अपने लोगों को बेहतर चिकित्सा सुविधा देने यदि हमें डॉक्टर चाहिये तो इतना तो हमें करना ही पड़ेगा वरना हमारे खर्च पर डॉक्टर बनने के बाद यह हमसे ही मोटी फीस ऐठते रहेंगे और दूर पहाड़ में हमारे लोग सही ईलाज के अभाव में असमय मरते रहेंगे।

Mock Exercise

Three days Mock Drill Exercise was held in district Haridwar in coordination and support from NDMA from 4th February to 6th February 2015.

The mock exercise was held with an objective to test the preparations of the district with respect to Industrial disaster. The exercise was conducted under the guidance of Major General V. K. Dutta (Retd.) Senior Consultant NDMA. The first day meeting was with the key appointments in the district administration to discuss the objectives and conduct of the mock exercise.

The second day was dedicated to the discussions and presentations from line departments in the district and presentations from NGOs, Industrial partners and officials from SIDCUL. The vulnerability of the whole state was shared by representative from ATI Nainital and thereafter district vulnerability and preparation was discussed at length.

Line departments as PWD, Health, Power, Police, Transport, Food and civil supplies, Animal husbandry, Irrigation, Forest, Jal Nigam, Fire services also made their presentations and discussed at length the problems they face in the event of any disaster. Their strengths, issues with respect to manpower, technical resources, training and budget were discussed by officials at length and stress was laid upon first of all identifying the threats in details especially w.r.t industries; of which the onsite procedures are much in place, however the offsite safety measures and coordination with other departments and district administration needs to be put in place so as to better respond in case of any eventuality.

As the different representatives from various industries viz. IOC, ITC, Hero Honda etc, started sharing their details it was realized that almost every industry was carrying and holding chemicals and other materials which could be termed as hazardous and their transportation and storage both required utmost caution. Besides, the awareness of potential threats needs to be shared on a regular basis with the masses and district administration. Due diligence must be done to make foolproof plans and testing of such plans with involvement of different stakeholders on a regular basis is a must. The amalgamation of Chemical Biological Radiological Nuclear (CBRN) hazard plan with the overall plan of the district disaster management plan is a must.

The second half focused on the Incident Command system (ICS) and a presentation was made by Major General V. K. Dutta on the advantages of incorporating ICS into the administrative structure at all levels. The inputs from Army and NDRF, Shantikunj were also taken for overall assessment of their resources in the district and the time these forces would take to become fully operational in the district in case of any emergent situation.

The third day the actual mock exercise was conducted with an earthquake scenario and damages to houses, in colony next to IOC plant at Bahadarabad where the response of traffic police, health, NDRF and other organizations was seen right from their movement from the Staging Area (SA) to the site of disaster. Thereafter the scenario for fire at IOC plant was built up and the onsite safety procedures were activated and checked on ground.

After this a fire breakout scenario was built at ITC premises and actual evacuation of casualties and injured was practiced along with the fire drills. A number of volunteers were involved in the same.

This was followed by demobilization of all the resources engaged in the exercise and a debriefing of all key officials. The debriefing came out to be very participatory and various officials again shared their

experiences and clarified the doubts they had in mind with respect to various major and minor issues.

Lessons Learnt

1. All officials should read the DDMP and SOPs and give a certificate w.r.t. having read the document.
2. The mobilisation at the Staging Area (SA) should be task force wise.
3. Resource list, list of resources mobilised from SA and additional resources to be replenished in SA needs to be properly documented.
4. Entry and exit points at SA should be spacious and sentries should be deployed at SA.
5. More official should be encouraged for training on Incident Command System (ICS).
6. Dedicated disaster management wireless radio system need to be activated with frequency allotted for DM only; along with separate call sign.
7. Medical aid post at site of incident should be fully equipped with doctors, paramedics and essential medical equipments, stretchers, table, chairs etc. All the records should be well kept and documented w.r.t the injured and others.
8. Data with respect to all the industries, kind of material, neighbouring population and telephone numbers should be available and updated at fixed intervals, at least once in six months.
9. It was stressed that continuity of various appointments for a fixed duration; at least 01-02 years is a must for proper development and implementation of DDMP.
10. Frequency of mock drills needs to be increased, at least twice annually.
11. Fire services need to be equipped with better fire tenders and the ones which can cater to the heights of multi-storeyed structures. Besides, new and latest technical equipment need to be procured for fire services.
12. Greater number of doctors needs to be trained on Mass Casualty Management and psycho-social care.
13. Regular training needs to be conducted for volunteers.

The mock exercise came to an end with thanksgiving from the district administration to NDMA and with a request to NDMA to keep conducting such useful exercises from time to time.

फाइल चरित्रम्

–गोविन्द रौतेला

वह दफ्तर नहीं जहाँ टेबलों का घेरा और फाइलों का डेरा न हो। बड़ा सीधा सा को-रिलेशन है दोनों में..... क्योंकि दफ्तर हैं तो फाइलें हैं और फाइलें हैं तो दफ्तर हैं.....। वैसे दफ्तरों में परिचारक, बाबू, अधिकारी से लेकर अमला-गमला तक सब कुछ होता है, लेकिन इन सभी को सक्रिय केवल फाईलें ही करती हैं। व्याकरण की भाषा में कहें, तो फाईल कर्ता हुयी और बाकी सब कारक।

जब फाइलें कर्ता हुयी तो जाहिर है कि वे निर्जीव नहीं हो सकती और जब फाईलें निर्जीव नहीं, तो उनका अपना चरित्र होना तय है। कुल मिलाकर सिद्ध हुआ कि हमारी ही तरह प्रत्येक फाइल भी अपने चरित्र के कारण जानी-पहचानी जाती हैं। आज मैं कुछ ऐसी ही उम्दा और अपरम्पार माया की धनी फाइलों के चरित्र-चित्रण की बागी कोशिश करूंगा.....।

कुछ फाइलें सैर-सपाटे वाली होती हैं। दफ्तर का सारा अमला-गमला इनकी तरफ बड़ी हसरत भरी निगाहों से देखता हैं। इनका परिचालन प्राय: ऊपर से नीचे की ओर होता है। इनकी दूसरी खास बात यह है कि इन्हें छूने या इनके सानिध्य के लिये आपका डील-डौल ठीक-ठाक होना चाहिये। लल्लू-टल्लू टाईप इनके आस-पास फटक भी नहीं सकते, क्योंकि ये उन्हें जोर का झटका मार सकती है। ऐसी फाइलों में सटासट अनुमोदन होता है; क्योंकि ऐसी फाइलों के लिये नियम-कानून व नजीर की कोई खास जरूरत नहीं होती है। ये फाइलें फर्राटा दौड़ के सभी रिकार्ड ध्वस्त करने में सक्षम होती हैं।

इसके ठीक विपरीत कुछ फाइलें तिरस्कृत वर्ग की होती हैं। इनकी तरफ कोई देखना तक पसन्द नहीं करता है क्योंकि यह पचड़े वाले कामों से भरी होती रहती हैं। ऐसी फाइलों में दिलेरी दिखाना, आ बैल मुझे मार के समान समझा जाता है। जानबूझ कर ऐसी फाईलें लल्लू-टल्लू की तरफ सरका दी जाती हैं ताकि व्यर्थ की माथा-पच्ची करते-करते उसके दिमाग का दही हो जाये और राशिफल में लिखी भविष्यवाणी उस पर सर्वथा सत्य निकलें..... कि आज व्यर्थ की भाग-दौड़ और उलझनें रहेगी..... किसी अधिकारी का कोपभाजन होना पड़ेगा..... मानसिक तनाव के कारण स्वास्थ्य नरम रहेगा..... इत्यादि... इत्यादि । अब आप ही बतलाइयें कि कौन ऐसी फाइलों के चक्कर में अपना पारिवारिक जीवन दाँव पर लगायेगा।

कुछ फाइलें वज़न में काफी हल्की होती है और एक बड़ी तादात में पायी जाती हैं। यदि सही समय रहते इन पर अपेक्षित वज़न नहीं रखा जाये तो इनके उड़ कर कूड़ेदान में जाने की सम्भावना हमेशा ही बनी रहती है। चतुर दृष्टा ऐसी फाइलों पर पैनी निगाह बनाये रखते हैं और सुनिश्चित करते हैं कि इन फाइलों को अंजाम तक पहुचाने का काम उनके ही हिस्से आये। हल्की होने के बावजूद उपयुक्त वजन रख देने के बाद यह फाइलें ठुमक-ठुमक कर चलने लगती है और गन्तव्य तक सुरक्षित पहुँच जाती हैं। फाइल खुश.....मसौदा खुश और अमला-गमला भी खुश।

कुछ फाइलें मौकापरस्त श्रेणी की होती हैं। वह वक्त की नजाकत को समझते हुये जानबूझ कर 'ढूँढो तो जानू' वाला गेम खेलने लगती हैं। वैसे भी असुविधाजनक फाइलों का गुम हो जाना कोई नई बात नहीं है। फिर इस प्रकार की बदस्वाद फाइलों में पड़े-पड़े इतनी धूल जम जाती है कि यदि गलती से भी उनमें हाथ पड़ जाये तो उठने वाले धूल के गुबार से आपकी तीनों इन्द्रीयाँ और फेफड़े जवाब देने में देर नहीं लगायेंगे। ऐसे में इन्हें ढूँढने और हाथ लगाने का जोखिम ले तो कौन?

लास्ट बट नॉट लीस्ट..... कुछ फाईलें आम आदमी की तरह ही सीधी-साधी और बिना पहुँच वाली होती है। ऐसी फाइलें किन्तु-परन्तु और वार्ता के चक्करों में घूमते-घूमते इतनी घूम जाती हैं कि इन्हें चक्कर आ जाता है और अन्तत: वे कोमा में चली जाती हैं। देर-सवेर अमला-गमला त्वरित कार्यवाही से इन्हें मृत प्राय: मान कर इनका अन्तिम संस्कार कर देता है। इधर फाईलें साफ..... उधर मामले का पटाक्षेप.....। गजब की बात यह है कि आप चाहे जो अधिकार प्रयोग में ले आयें, आपको इन फाइलों के अन्तिम संस्कार से सम्बन्धित सूचना मिलने से रही।

फाइल चाहे जैसी भी हो पर यहाँ ऑफिस में बाबू और अफसरों का एक बड़ा अमला ऐसा होता है जो यह बताने-जताने में दक्ष होता है कि फँला-फँला काम क्यों और कैसे नहीं किया जा सकता है। इस काम में वह किसी विशेषज्ञ से कम नहीं होते हैं। फिर बिना मेहनत और लगन के यह काम कर पाना सम्भव भी नहीं है। इस काम में महारथ बनाये रखने के लिये यह लोग सन्दर्भ के लिये अपने पास मोटी-मोटी किताबों का जखीरा हमेशा उपलब्ध रखते हैं। अपने काम को सही अंजाम तक पहुचाने के लिये यह पहले से हाइलाइट कर के रखे गये नियमों की व्याख्या किसी अमोघ अस्त्र की ही तरह करते हैं और इनके वार से बच पाना असम्भव नहीं तो कठिन जरूर है। यदि आपकी फाइल भी किसी दफ्तर के चक्कर काट रही हो तो ईश्वर से मन्नत माँगिये कि वह ऐसे किसी बाबू या अफसर की छाया से भी दूरे रहे।

WE: THE SELFISH CREATURES....

- Lalima Yadav

Last night, I switched on the television
Similar news was flooded in the every channel
“Uttrakhand shaked, landslide occurred "
Says all the breaking news, " livelihood badly suffered"
My heart melth & I got thrilled
I kept the remote aside &got still.
From the incident spot, every picture was telecasted.
As I looked upon them I got devasted.
Slowly, slowly, with every next picture
I turned sorrowful & got shattered
A questions that made me quite thoughtful,
For all such horrible incidents, who is responsible ?
Without any second thought in my mind
I got a satisfactory answer, i.e mankind
Yes ! It's nobody else but we the selfish creatures
The one who has disturbed the peaceful nature.
Like our earth no other planed is ever found
C' mon people ! wake up and look around
How badly ill is our mother earth ?
Please ! take a stand and realize
Nature's worth.

तत्काल आरक्षण

–पीयूष रौतेला

आम आदमी के लिये कहीं भी आने-जाने के लिये रेलगाड़ी सर्वाधिक सुलभ और सस्ता विकल्प है। फिर यदि रेलगाड़ी सीधे आपके गन्तव्य तक की हो आरक्षण मिल जाये तो कहना ही क्या। न इन्तजार, न गाड़ी बदलने का झंझट और न ही इस बात की चिन्ता कि सीट मिलेगी या नहीं। उस पर हाथ-पैर सीधे करने, घूमने-फिरने व खाने-पीने की सुविधा अलग से।

दरअसल बच्चे की तबीयत कुछ ठीक नहीं थी और काम-काज की व्यस्तता के कारण मेरा साथ जा पाना सम्भव था नहीं। ऐसे में पत्नी का रेल से आरक्षण करवा कर गृह क्लेश की सम्भावना को एक सीमा तक कम किया जा सकता था।

बाड़मेर एक्सप्रेस; हरिद्वार से सीधे जोधपुर, करीब 24 घण्टे का सफर और कोई झंझट नहीं। 13 दिसम्बर का आरक्षण भी उपलब्ध था, सो बिना ज्यादा दिमाँग खपाये, झट से करा भी लिया। पर यहाँ कार्यक्रम तो बनाया ही बदलने के लिये जाता है; सो कुछ काम आ जाने के कारण टिकट अंतिम समय में कैंसिल करवा दिया गया। खैर कोई परेशानी की बात नहीं है; आखिर हमारी सरकार ने 'तत्काल' की सुविधा हमारे जैसे लोगों को परेशानी और गृह क्लेश से बचाने के लिये ही तो दे रखी है। थोड़ा सा पैसा ज्यादा जरूर लगता है पर सपने में भी उसकी तुलना पत्नी के आराम से कर के गृह क्लेश का जोखिम तो कोई मूर्ख ही मोल लेगा।

'तत्काल ने अपनी सारी चिन्तायें सच में हर ली थी। पूरी तरह आश्वस्त था मैं; सब कुछ सैट जो कर दिया था। अब कच्चे खिलाड़ी तो रहे नहीं। मालूम है कि सुबह 'तत्काल' को ले कर मारामारी होती है अत: ऑफिस के एक मुलाजिम को खास इसी काम में लगा दिया था। एकदम फूलप्रूफ प्लॉन था; सुबह जल्दी लाईन में लग जाना और खिड़की खुलते ही झट से आरक्षण। किसी भी प्रकार के झंझट से बचने के लिये आरक्षण फार्म भी डाउनलोड कर के स्वयं ही भर कर उसे दे दिया था। फिर शाम को ऑफिस छोड़ने से पहले हर चीज की बारीकी से जाँच कर ली थी और आदतन सारे निर्देश एक बार फिर से दोहरा दिये थे। पता नहीं क्यों पर मैं सुनिश्चित करना चाहता था कि पत्नी नियत तिथि में चली ही जाये..... आप इसे अन्यता न लें.... यहाँ सवाल बच्चे की तबीयत से जुड़ा था।

खैर तमाम जद्दोजहद के बाद भी आरक्षण हो नहीं पाया और जो मिला वो था प्रतीक्षा सूची का सातवा टिकट। बहुत दिमाँग लगाया पर कुछ समझ में नहीं आया कि आखिर चूक हुयी तो कहाँ। अन्त में निष्कर्ष यही निकल पाया कि हमारे महानुभाव ने ही जाने-अनजाने निर्देशों के अनुपालन में कोई चूक की होगी। जो भी हो असफलता का ठीकरा तो उसके ही सिर फूटना था। हो सकता है यहाँ आफिस की डाँट-फटकार का बदला ऐसे ले लिया हो।

ऐसे में गहन पूछताछ करना स्वाभाविक था; गृह शान्ति जो दाँव पर लगी हुयी थी। पता चला की लाईन पर तो वह नियत समय पर लग गये थे पर खिड़की खुलने से पहले नम्बर लिखे हुवे गुलाबी रंग के आरक्षण फार्म भरने को दिये गये थे और बताया गया था कि तत्काल में आरक्षण डाउनलोड किये गये फर्मों से नहीं होगा। साथ ही यह भी पता चला कि इन फार्मों पर लिखे गये नम्बरों का लाईन के नम्बर से

Ferocious lightning strikes all set to increase globally

New climate models have predicted a 50 percent increase in lightning strikes across the world during this century as a result of warming temperatures associated with climate change.

University of California, Berkeley's climate scientist David Romps and his colleagues looked at predictions of precipitation and cloud buoyancy in 11 different climate models and conclude that their combined effect would generate more frequent electrical discharges to the ground.

With warming, thunderstorms become more explosive that is related with water vapour, which is the fuel for explosive deep convection in the atmosphere. Warming causes there to be more water vapour in the atmosphere, and more fuel lying around simply implies explosive results with ignition.

More lightning strikes mean more human injuries; estimates of people struck each year range from the hundreds to nearly a thousand, with many deaths. Another significant impact of increased lightning strikes is highlighted as being more wildfires, since half of all fires, and often the hardest to fight, are ignited by lightning. More lightning also would likely generate more nitrogen oxides in the atmosphere, which exert a strong control on atmospheric chemistry.

While some studies have shown changes in lightning associated with seasonal or year-to-year variations in temperature, there have been no reliable analyses to indicate what the future may hold.

"Lightning is caused by charge separation within clouds, and to maximize charge separation, you have to loft more water vapour and heavy ice particles into the atmosphere," said David Romps. "We already know that the faster the updrafts, the more lightning, and the more precipitation, the more lightning".

Precipitation - the total amount of water hitting the ground in the form of rain, snow, hail or other forms - is basically a measure of how convective the atmosphere is, and convection generates lightning. The ascent speeds of those convective clouds are determined by a factor called CAPE, convective available potential energy, which is measured by balloon-borne instruments, called radiosondes.

CAPE is a measure of how potentially explosive the atmosphere is, that is, how buoyant a parcel of air would be if it gets convecting and punches through overlying air into the free troposphere. The researchers hypothesized that the product of precipitation and CAPE would predict lightning.

कोई सम्बन्ध नहीं था और तत्काल में आरक्षण इस गुलाबी फार्म पर लिखे नम्बर के आधार पर किया गया था।

इस गुलाबी फार्म की गुत्थी को सुलझाने का मन तो बहुत था परन्तु उस समय इस पर माथापच्ची करने से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण पत्नी को शान्तिपूर्वक नियत समय पर विदा करने का जुगाड़ करना था। सो किसी तरह जुगाड़ करके कोटे की सीट का प्रबन्ध किया गया।

अब पत्नी थी नहीं तो जाहिर है कि घर में चौपाल लगेगी। तमाम तरह की चर्चाओं के बीच ऐसी ही एक चौपाल में रेलवे आरक्षण पर भी चर्चा हो चली। लगा जैसे किसी ने दुखती रग पर हाथ रख दिया हो। सो हमने भी अपना ताजातरीन एक्सपीरियंस शेयर कर दिया। इस पर एक मित्र ने बताया कि जब भी ऐसी कोई आवश्यकता हो उन्हें बता दिया जाये; टिकट घर पहुँच जायेगा। लाईन का कोई झंझट है ही नहीं। काफी नजदीकी मित्र थे और आत्मविश्वास का स्तर बता रहा था कि वो केवल फैंक नहीं रहे थे। ऐसे में उत्सुकता होना स्वाभाविक था कि आखिर यह सब होता कैसे है। जो कुछ सामने आया उससे आँखें खुली की खुली रह गयी।

पता चला कि यात्रियों को सुबह-सुबह लाईन में लगने और धक्के खाने से बचाने के लिये रेलवे द्वारा पहले दिन शाम के समय एक रजिस्टर की व्यवस्था की है जिससे अगले दिन तत्काल सेवा का टिकट चाहने वाला व्यक्ति अपना नाम दर्ज करा सकता है। इस प्रकार लाईन का झंझट ही नहीं बचा क्योंकि अगले दिन तत्काल की खिड़की खुलने पर इस रजिस्टर में अंकित क्रमानुसार ही टिकट दिये जाते हैं। यह सुनिश्चित करने के लिये कि सब-कुछ तय व्यवस्था के अनुरूप हो सुबह तत्काल की खिड़की खुलने से पहले रजिस्टर में दर्ज व्यक्तियों को उनके क्रमांक लिखे गुलाबी फार्म बाँटे जाते हैं।

अब यह गुलाबी फार्मों की और इस प्रकार के रजिस्टर की व्यवस्था पूरे देश में है या फिर केवल हमारे यहाँ इस सम्बन्ध में रेलवे की वेब साइट पर कुछ विशेष जानकारी मिल नहीं पायी। खैर पहल ठीक-ठाक है और इससे लोगों को कुछ राहत तो मिल ही सकती है पर कुछ लोग अपनी यात्रा का कार्यक्रम अचानक भी बना सकते हैं और शायद तत्काल सेवा उन्हीं की सुविधा को ध्यान में रख कर बनायी गयी हो। ऐसे में वह सब लोग तो इस सेवा के लाभ से वस्तुतः वंचित ही हो जायेंगे। सुबह चाहे जितनी जल्दी रेलवे स्टेशन क्यों न

पहुँच जाओं टिकट आपको रजिस्टर में अंकित आपके नम्बर के हिसाब से ही मिलेगा लगा कि व्यवस्था में कमी तो है।

अब यह कहानी का अन्त नहीं है। रोचक मोड़ तो यही हैं, सो आगे पढ़ते रहिये।

इतना सब बता देने के बाद पूरे आत्मविश्वास के साथ यह बताया गया कि आप चाहे कभी भी रेलवे स्टेशन पहुँच जाये सम्बन्धित रजिस्टर में आपका नम्बर 20 के ऊपर ही रहेगा। मतलब साफ था कि आप चाहे जो कर लो तत्काल के 20 टिकट बन जाने के बाद ही आपका नम्बर आयेगा। ऐसे में आपको मेरी तरह प्रतीक्षा सूची का टिकट तो मिल सकता है पर आरक्षण के प्रति आश्वस्त टिकट नहीं।

फिर पता चला कि रजिस्टर में हर शाम दर्ज होने वाले पहले 20 लोगों के नाम वही नजदीक में पर्यटन व विभिन्न प्रकार के टिकटों के आरक्षण का व्यवसाय करने वाले एक प्रभावशाली व्यक्ति से सम्बन्धित होते हैं। निर्धारित सुविधा शुल्क दे कर आप किसी भी नम्बर वाला गुलाबी फार्म ले सकते हैं।

हो सकता है कि मेरी ही तरह आपके लिये भी यह एक जानकारी हो। पर यहाँ मेरा उद्देश्य आपको जानकारी देने से कहीं ज्यादा आपको टिकट के लिये सुबह-सुबह उठने और देर तक लाईन में खड़े रहने के बाद की सम्भावित मायूसी से बचाने का है। फिर इस जानकारी के आधार पर आप तत्काल के भरोसे न रह कर अपनी यात्रा को पहले से पुनर्निर्धारित भी तो कर ही सकते हैं।

और फिर यदि आप सम्बन्धित ट्रेन से ही जाना चाहते हैं तो एक सशक्त विकल्प भी मैंने आपको सुझा ही दिया है। उन्होंने नम्बर भी दिया था मुझे और यदि इस बीच काम की आपाधापी में मैंने उसे खो न दिया होता तो वो भी मैं आपको दे ही देता। पर उन महाशय का नम्बर ढूँढना आपके लिये ज्यादा कठिन नहीं होगा। रेलवे स्टेशन पर यदि आप किसी को भी यात्रा करने की अपनी मजबूरी बतायेंगे तो वह साहनुभूति दिखाते हुये आपको वह नम्बर दे ही देगा।

बस आपसे अनुरोध केवल इतना है; कृपा कर के वह नम्बर आप मुझे भी बता ही दे ताकि अन्य पाठकों की सुविधा के लिये अगले अंक में उसे छाप दिया जाये। आशा ही नहीं विश्वास है कि आप निराश नहीं करेंगे।

Workshop for Panchayat Raj representatives on community based disaster risk

The recent incidences of landslides, flash floods and forest fire in Uttarakhand have resulted in massive losses to human lives together with irreparable damages to the environment and ecology. Since community is the first responder in the aftermath of any disaster, it is the community whose capacities need to be strengthened first and foremost.

In view of this it is important to link various disaster management related approaches to community and Panchayat Raj Institutions and members so as to strengthen disaster management systems at the grass root levels and thus also promote bio-diversity conservation through people's participations. For this it is important to sensitize and orient PRI members and build their capacities to address and integrate the DRR related concerns in their core programs. This in turn is envisaged to enhance capacity of the local community to manage and mitigate the disaster risk.

The first training of PRI members was organized inUttarkashi district and after incorporating the feedbacks and learning experience of this, second training was organized in Almora district on 19 and 20 February, 2015.

The objective of the training was to orient PRI members on various disaster management related concerns affecting the masses at grassroots level and to sensitize them on how their initiative could help in reducing vulnerability and building disaster resilient community.

The training was organised for 30 PRI members from Hawalbagh block of Almora district. Of the 30 Pradhans attending the training, 29 were elected for the first time and did not have much knowledge of Panchayati Raj Act and 73rd- 74th constitutional amendments. Therefore the first session focused on roles and responsibilities of PRI members and thereafter they were oriented on the role of six sub committees formulated in Gram Panchayats.

Even though many participants had faced disasters in their life the topic of disaster risk reduction was new for them and therefore the first day was dedicated to discussing and highlighting the importance of small interventions at the level of the community in reducing the threat of disasters. The participants were subsequently asked to put forth two priority items that they would like to address during their tenure.

The sessions started with building understanding of the participants on different disaster management related issues together with the concept of community based

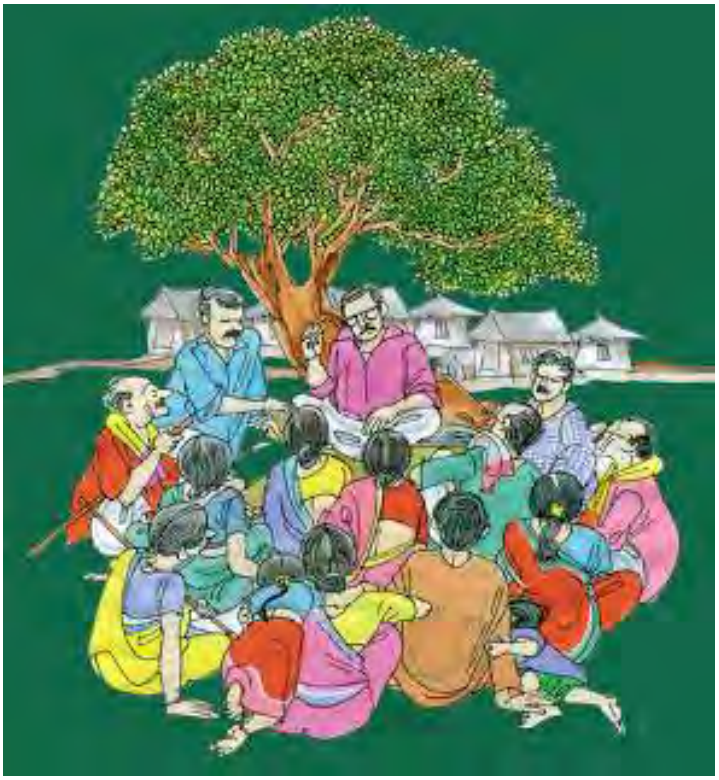

DRR. They were encouraged to narrate previous disasters in the village / region highlighting the causes of disaster as they understand reaction of community and government, what went wrong and how the situation could have been better managed. Group exercises were resorted to for better understanding of the related issues and various issues discussed included:

1. Community based hazard assessment
2. Community based vulnerability assessment
3. Capacity assessmentof the community
4. Participatory risk analysis
5. Identification of priority group(s)
6. Identification of natural leaders or "progressive members"
7. Feedback/validation of results of participatory risk analysis
8. Further analysis of the priority problems /needs /aspirations
9. Planning of the risk reduction measures
10. Organization of the risk reduction groups
11. Capacity building and facilitation of community

Thereafter, the roles and responsibilities of PRI members in pre - disaster, during disaster and post - disaster phases were discussed at length. In the first session of the second day the issues discussed during the previous day were summarized by the participants and they also shared as to what they had learnt or understood in the previous day's session. The focus of day was on risk analysis framework, which was followed by group exercise on social mapping. Participants were divided into three groups and they were first asked to list the

Oceans play key role in global 'warming hiatus'

Increased heat uptake across three oceans North Atlantic, the Southern Ocean and Equatorial Pacific Ocean is the likely cause of the 'warming hiatus' the current decade-long slowdown in global surface warming, says a study published in Geophysical Research Letters.

The increased oceanic heat drawdown has played a significant role in the hiatus, the findings showed. The deeper understanding gained in this study of the processes and regions responsible for variations in oceanic heat drawdown and retention would improve the accuracy of future climate projections, the researchers claim. The researchers used data from a range of state-of-the-art ocean and atmosphere models.

This study attributes the increased oceanic heat drawdown in the equatorial Pacific, North Atlantic and Southern Ocean to specific, different mechanisms in each region. The significance of the research lies in the fact that the current climate models have been unable to simulate the hiatus. This study gives clues to where the heat is drawn down and by which processes.

Previously, the drawdown of heat by the Equatorial Pacific Ocean over the hiatus period, due to cool sea-surface temperatures associated with a succession of cool-surface La Nina episodes, was thought to be sufficient to explain the hiatus. This new analysis however revealed that the northern North Atlantic, the Southern Ocean and Equatorial Pacific Ocean are all important regions of ocean heat uptake.

common assets of the village and then spot all the households in the chart. After that they were asked to map all the vulnerable sites of the village.Their presentation highlighted the risk as identified and perceived by them and the ways to address these.

Land slide zones, flood prone areas, open defecation sites, poor village paths, poor forest paths, vulnerable common assets like schools and Panchayat Ghar and forest fires were identified by most participants as being a problem in their village. Participants enthusiastically suggested measures to address these problems and gave information regarding existing government programs and schemes that they can approach with the concerned departments to address their disaster mitigation and risk reduction related concerns.

At the end of training session all participants made commitment to undertake risk assessment exercise in their respective Panchayats and find out mitigation measures by involving villagers. They were advised to submit proceedings and findings of village level exercise to DPO Almora and to their respective block offices.

On the basis of the feedback given by the participants and by the observation of facilitators during different discussion and group exercises undertaken by the PRI members, it is concluded that basic understanding has been developed on the subject of community based DRR.

समाचार और नैतिक जिम्मेदारी

–पीयूष रौतेला

पिछले दस-एक सालों में जिन्दगी का स्वरूप काफी कुछ बदल गया है और साथ ही जीने का तरीका भी। इसके साथ लम्बे समय से स्थापित व्यवस्थाओं, काम करने के तरीको में भी परिवर्तन आया है।

बचपन में लम्बे समय तक बाहर खेलने के बाद बचा ज्यादातर समय कुछ ना कुछ पढ़ने में बीतता था। घर में किराये पर या खरीद कर आने वाली किताबों व पत्रिकाओं के साथ ही काफी ऐसी भी होती थी जिसे पड़ोस से माँग कर लाया जाता था। बेताल, बाबा मोज, गुईन, मैड्रेक, लोथार, डायना, चाचा चौधरी और साबू के सम्मोहन से तब बच पाना कठिन था। आज के चरित्र में शायद वह जादू पैदा कर सकने की क्षमता नहीं है। अब ऐसी भी नहीं है कि आज टेलीविजन पर दिखाये जाने वाले कार्टून नीरस हैं। टॉम एण्ड जैरी, पापया कई हैं जो मैं आज भी देखना पसन्द करता हूँ।

पर जहाँ तक देखने और पड़ने की बीच चुनाव का प्रश्न है आज के बच्चों के विपरीत मैं पढ़ना ज्यादा पसन्द करता हूँ। पढ़ने के रोमांच की आज भी एक अलग अनुभूति है और में उसकी तुलना मात्र देखने-सुनने से नहीं कर सकता। साहित्य के लिये वैसे अब बहुत ज्यादा समय निकाल पाना सम्भव नहीं हो पाता है और ज्यादातर स्थितियों में पढ़ने का शौक खबरों तक सीमित हो कर रहा जाता है।

इस सन्दर्भ में यह कहना गलत नहीं होगा कि आज समाचार या खबर का स्वरूप एकदम से बदल गया है। अखबारों में तो फिर भी कुछ छप रहा है। पर खबरों के नाम पर चल रहे अनेकों चैनलों पर जो परोसा जा रहा हे उसे चाहे जो कह लें पर कम से कम समाचार तो नहीं कहा जा सकता। बात-बेबात और हर बात पर बहस, खबरों में बने रहने के लिये कुतर्क दे कर स्वयं को विशेषज्ञ सिद्ध करने की कोशिश और शब्दजाल में फॉस कर पहले से तय ऐजन्डे के अनुमोदन करने को खबर तो नहीं कहा जा सकता। अब यदि आपको इन खबरों के असर की जाँच करनी हो तो किसी भी सामान्य युवा के सामान्य ज्ञान की परीक्षा ले सकते हैं; इतना 'सो कॉल्ड' एक्सपोजर होने के बाद भी उससे जो जानना अपेक्षित है उसे शायद ही मालूम हो।

आज यहाँ हर कोई सामाजिक उत्तरादायित्व की बात करता नजर आता है ऐसे में क्या इन खबरिया चैनलों का दायित्व नहीं बनता कि देश-दुनिया में जो हो रहा है उसकी निष्पक्ष तस्वीर सामने रखें और देखने-सुनने वालों को तथ्यों का परीक्षण कर अपनी राय बनाने दें। केवल दुकान चलाने के लिये अपनी राय मढ देना तो कहीं से भी ठीक नहीं है।

फिर आज के समय में लोग खबरों में बताये तथ्यों को उद्हरण शोध पत्रों के डॉटा की तरह करने लगे हैं। उन्हें समाचारों पर तो विश्वास है पर किताबों पर नहीं। ऐसे में खबरों के कर्ताधर्ताओं की सामाजिक जिम्मेदारी और ज्यादा बढ़ जाती है।

अब ठीक है आज ब्रेकिंग न्यूज का प्रैशर रहता है। धन्धे में बने रहने के लिये सबसे जल्दी बताने की बेसब्री का होना भी लाजमी है। पर इस प्रैशर और बेसब्री में हिमस्खलन को बर्फीला तूफान बना देना और खबर चलाने के लिये किसी को मृत घोषित कर देना भी तो ठीक नहीं है।

Climate change to make food less nutritious

It is well known that plants, using energy from sunlight, make food from carbon dioxide present in the air. So, it is logical to argue that the plants are going to make more food if carbon dioxide levels in the air are going up due to climate change. Research results of a team of US, Australian and Japanese scientists undertaken under the leadership of Professor Samuel Myers of Harvard University, United States and published recently in Nature however negate this assertion.

The study claims that the carbon dioxide emissions are slowly making the world's staple food crops less nutritious and asserts that wheat, maize, soybeans and rice would witness depletion in the levels of their nutrients; iron and zinc, as well as proteins, between now and 2050.

To obtain these results, the team compared nutrient levels in field crops grown in ambient CO_2 levels, about 380-390 parts per milliion (ppm) with those grown in the elevated CO_2 levels expected by 2050. In order to take account of variable growing conditions, the researchers analysed 41 different strains grown in seven locations on three different continents.

Due to an unknown biological mechanism, wheat grown in high CO_2 levels had 9 percent less zinc and 5 percent less iron, as well as 6 percent less protein, while rice had 3 percent less zinc, 5 percent less iron and 8 percent less protein. Maize and soybeans also witnessed similar falls but, the latter being a legume it did not show lower protein.

Rice, maize, soybeans and wheat are the main source of nutrients for over 2 billion people living in poor countries. But with climate change and the rising amount of CO_2 in the air we breathe, their already low nutrient value compared to meat, for instance, is sure to decrease.

The study found that rising level of CO_2 is affecting human nutrition by reducing levels of very important nutrients in very important food crops. From a health viewpoint, iron and zinc are hugely important and close to one third of the world's population already suffers from iron and zinc deficiencies, and according to this new study the rising levels of CO_2 would only make things worse.

The impact on human health resulting from the drop in the level of protein is less clear than for the zinc and iron loss. It could however increase the rate of metabolic syndrome, diabetes, heart disease and stroke.

The study negates the possibility that the affected populations could meet zinc and iron requirements just by eating more staple foods. The food production the study asserts has to already double by 2050 in order to meet the demand of rising populations. And while some of the varieties used in the research performed better than others, breeding programmes focused on these traits would not be a panacea for many reasons including the affordability of improved seeds and the numerous criteria used by farmers in making planting decisions that include taste, tradition, marketability, growing requirements and yield.

As to the relationship between increased CO_2 levels and improved crop yields the study indicates little positive effect.

अनापेक्षित प्रयास

-सुशील खण्डूरी

प्राकृतिक सौन्दर्य की पहाड़ी ढालों में हर तरफ
मिटाकर चट्टानों, जगलों का स्वरूप
सड़कों को जोड़ने का सिलसिला बदस्तूर जारी है।
ढालों को अस्थिर विन्यास में पाटती पट्टियों से
मशीनी हाथों से चीरते हुए.....,
उजाड़े गये मलबे को निचली ढाल पर लुढ़का कर
आकार दे दिया भूस्खलन का,
उत्पन्न कर प्रकृति के लिए एक नया अवरोध
अनायास विनाशक स्वरूप धारण कर जिसने,
किया तलहटी की कई आबादियों को नेस्तनाबूत।
इस कदर बना देगा हमें ही विनाश की धार
अव्यवस्थित एवं मनमाने विकास का विस्तार
ये किसी ने कभी सोचा ही नहीं.....।

जल और जलवायु

-भावना कार्की

पत्ता पत्ता कहता हम से
डाली डाली हरयाली हम से
इंसानों की भीड़ है तुम से
हरयाली से टीस है तुम को
बहता पानी और बहते झरने
पड़े हैं लगे कटने या पत्ते लगे हैं झड़ने
गर अमृत धारा थम जायेगी
प्राणी जीवन रूक जायेगा।
अब तो समझो तुम भी इतना, जीवन के दो रंग अनोखे
एक हरा अनोखा दूजा, समन्दर सा नीला।

भूकंप टिप – 5
ढाँचों पर भूकम्पी प्रभाव क्या होते हैं?

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर और भवन निर्माण सामग्री एवं प्रौद्योगिकी संवर्धन, नई दिल्ली द्वारा भूकम्प जागरूकता हेतु विकसित 24 कड़ियों वाली इस श्रृंखला के पुनः प्रकाशन की अनुमति दिये जाने के लिये हम प्रो. सुधीर कुमार जैन, सिविल इंजीनियरिंग विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर (वर्तमान में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, गाँधीनगर के निदेशक) के आभारी हैं।

ढाँचों में जड़त्व का बल

भूकम्प के कारण जमीन हिल उठती है। इसलिए जमीन पर खड़ी इमारत अपने आधार पर गति का अनुभव करेगी। न्यूटन के गति के पहले नियम के अनुसार, हालाँकि भवन का आधार भूमि के साथ हिलने लगता है, पर छत की यह प्रवृत्ति होती है कि वह अपने मूल स्थान पर ही बनी रहे। लेकिन, चूँकि दीवारें और स्तम्भ छत से जुड़े होते हैं, वे अपने साथ-साथ छत को भी खींचते हैं। इसकी तुलना काफी कुछ उस स्थिति से की जा सकती

है जब वह बस जिस पर आप खड़े होते हैं अचानक चल पड़ती है। आपके पाँव तो बस के साथ गतिमान होते हैं, लेकिन आपके शरीर के ऊपरी भाग की यह प्रवृत्ति रहती है कि वह अपनी पहली वाली स्थिति में ही रहे। इस कारण आप पीछे की ओर झटका महसूस करते हैं! पहले वाली स्थिति में ही बने रहने की इस प्रवृत्ति को जड़त्व (इनर्शिया) कहते हैं। चूँकि किसी इमारत में

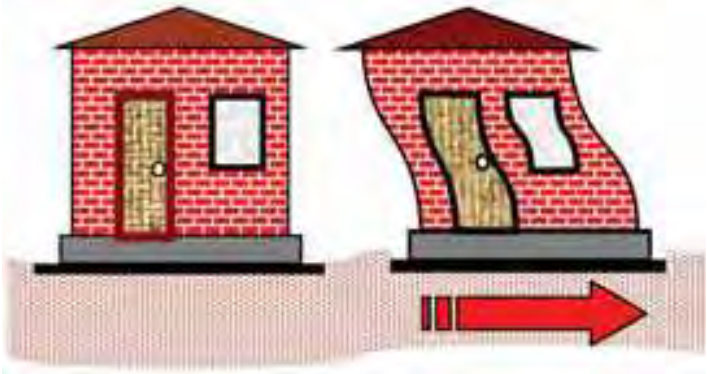

चित्र 1 : आधार पर प्रकंपित किये जाने पर किसी इमारत में जड़त्व का प्रभाव

दीवारें या स्तम्भ लचीलापन लिए होते हैं, इसलिए छत की गति, भूमि की गति से भिन्न होती है (चित्र 1)।

एक इमारत की कल्पना कीजिए, जिसकी छत स्तंभों पर टिकी हुई हो (चित्र 2)। आपके बस में सवार होने के उदाहरण पर एक बार फिर से विचार करते हैं : जब अचानक बस चल पड़ती है, तब आप पीछे की ओर झटके से गिर पड़ते हैं, मानो किसी ने आपके शरीर के ऊपरी हिस्से पर बल का प्रयोग किया हो। जब धरती हिलने लगती है, वह इमारत भी उसी तरह पीछे की ओर गिरती है और छत एक बल का अनुभव करती है जिसे जड़त्व बल कहते हैं। यदि उस छत का द्रव्यमान एम (M) है और वह त्वरण ए (a) का अनुभव करती है तो न्यूटन की गति के दूसरे नियम के अनुसार, जड़त्व बल एफ (F1) त्वरण ए (a) और द्रव्यमान एम (M) का गुणनफल होता है और उसकी दिशा, त्वरण की दिशा के विपरीत होती है। स्पष्ट है कि अधिक द्रव्यमान का अर्थ अधिक जड़त्व बल का होना है। इसलिए हल्की इमारतें भूकम्प के झटकों को बेहतर ढंग से सहती हैं।

ढाँचों पर विरूपणों का प्रभाव

छत द्वारा अनुभव किया गया जड़त्व बल स्तंभों के माध्यम से भूमि को स्थानान्तरित कर दिया जाता है, जिससे स्तम्भों में बलों का सृजन होता है। स्तम्भों में सृजित इन बलों को एक दूसरे ढंग से भी समझा जा सकता है। भूकंप के झटकों के दौरान, ये स्तम्भ अपने सिरों के बीच आपेक्षिक गति का अनुभव करते हैं। चित्र 2 में छत और जमीन के बीच की इस गति को राशि यू (u) से दर्शाया गया है। लेकिन, यदि स्तम्भों का वश चले तो वे उसी सीधी खड़ी या उर्ध्वाधर स्थिति में ही वापस आना पसन्द करेंगे, यानी स्तम्भ विरूपणों के विरुद्ध प्रतिरोधिता दिखाते हैं। सीधी उर्ध्वाधर स्थिति में स्तम्भ किसी क्षैतिज भूकम्पी बल को अपने अन्दर वहन नहीं करते हैं लेकिन बलपूर्वक मोड़े जाने पर उनमें आंतरिक बलों की उत्पत्ति होती है। स्तंभ के ऊपरी और निचले हिस्से के बीच आपेक्षिक क्षैतिज विस्थापन यू (u) का मान जितना अधिक होगा, स्तम्भों में उत्पन्न यह आन्तरिक बल भी उतना ही अधिक होगा। स्तंभ जितने अधिक दृढ़ या सख्त होंगे (यानी स्तम्भ का आकार जितना बड़ा होगा), यह बल भी उतना ही विशाल होगा। इसी कारण

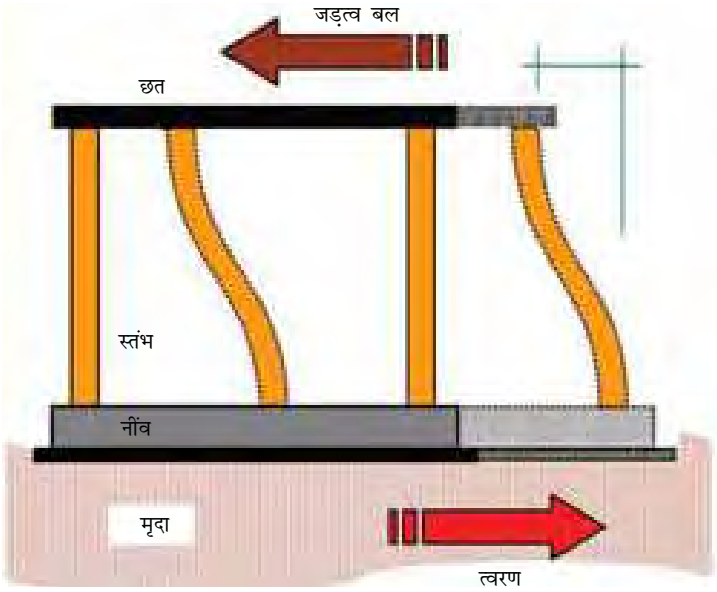

चित्र 2 : किसी भवन का अंदरूनी जड़त्व बल एवं आपेक्षिक गति

स्तम्भों में उत्पन्न इन आन्तरिक बलों को दुर्नम्यता (स्टिफनेस) बल कहते हैं। दरअसल, किसी स्तम्भ में पैदा हुआ दुर्नम्यता बल, स्तम्भ दुर्नम्यता और उसके सिरों के बीच के आपेक्षिक विस्थापन के गुणनफल के बराबर होता है।

क्षैतिज एवं उर्ध्वाधर प्रकम्पन

भूकम्प के कारण तीनों दिशाओं – दो क्षैतिज दिशाओं जिन्हें एक्स (x)और वाई (y) मान लें तथा एक ऊर्ध्वाधर दिशा (जिसे ज़ेड (z) मान लें) (चित्र 3) में जमीन हिल उठती है। भूकम्प के दौरान, जमीन यादृच्छिक रूप से सभी एक्स (x), वाई (y) और ज़ेड (z) दिशाओं में पीछे और आगे की ओर (– और +) डोलने लगती है। इमारतों के सभी ढाँचे मुख्य रूप से गुरुत्वीय भारों को उठाने के हिसाब से बनाए जाते हैं यानी वे द्रव्यमान एम (M) (जिसमें स्व

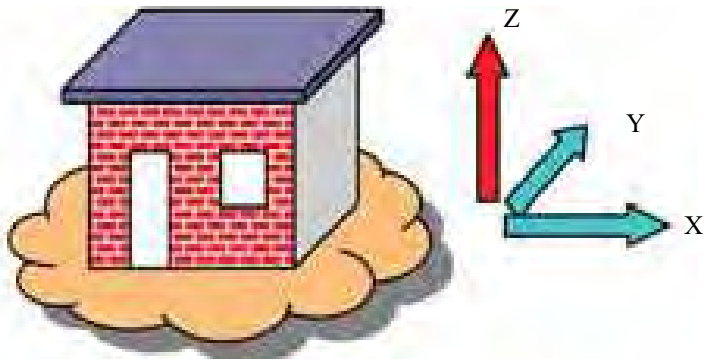

चित्र 3 : एक ईमारत की मुख्य दिशाएं

भार व आरोपित भारों के कारण द्रव्यमान शामिल होता है) और ऊर्ध्वाधर अधोमुखी दिशा '-ज़ेड' (-z) में कार्यरत गुरुत्वीय त्वरण के गुणनफल से प्राप्त होने वाले बल के हिसाब से बनाए जाते हैं। इस अधोमुखी बल एमजी (Mg) को गुरुत्वीय भार कहते हैं। जमीन के हिलने के दौरान ऊर्ध्वाधर त्वरण को या तो गुरुत्वीय त्वरण में जोड़ा जाता है या फिर इससे घटाया जाता है। चूंकि संरचनाओं की डिजायन में गुरुत्व भारों का प्रतिरोध करने के लिए सुरक्षा कारकों का ध्यान रखा जाता है, इसलिए ऊर्ध्वाधर प्रकंपनों को अधिकतर ढांचे अक्सर सह लेते हैं। लेकिन एक्स (X) तथा वाई (Y) दिशाओं में क्षैतिज प्रकम्पन (दोनों के ही + तथा - दिशाओं में) चिन्ता का विषय हैं। सामान्यतया गुरुत्वीय भारों के लिए डिजायन की गई संरचनाएं भूकम्प के क्षैतिज प्रकम्पनों को सुरक्षित रूप से झेल पाने में सक्षम नहीं होती हैं। अत: क्षैतिज भूकम्पी प्रभावों के विरुद्ध संरचनाओं की मजबूती को सुनिश्चित करना आवश्यक होता है।

नींवों तक जड़त्वीय बलों का पहुँचना

धरती के क्षैतिज प्रकम्पन के अंतर्गत, संरचना की संहति (जो सामान्यतया फर्श के स्तरों पर स्थित होती है) के स्तर पर क्षैतिज जड़त्वीय बलों का सृजन होता है। ये पार्श्वीय जड़त्वीय बल

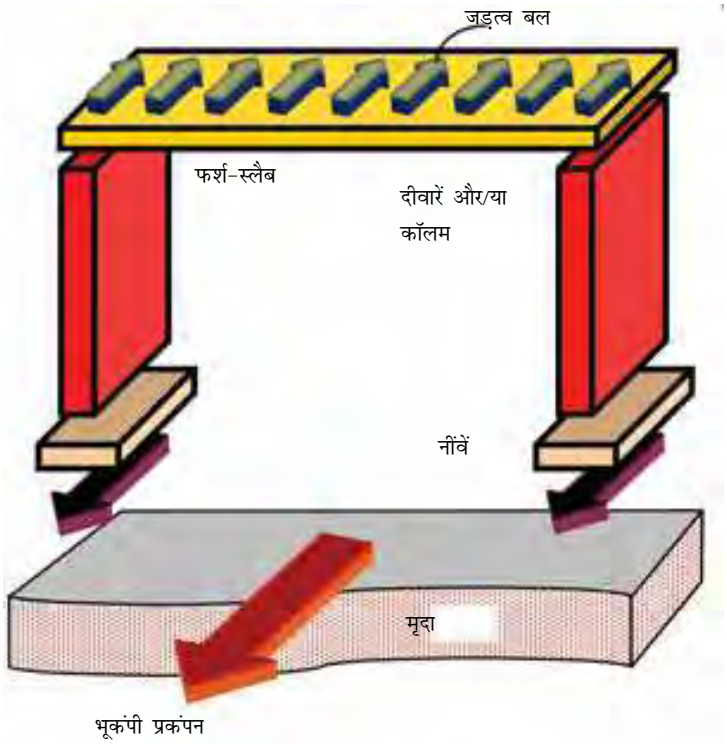

चित्र 4 : सभी संरचनात्मक घटकों से होकर भूकंपी जड़त्वीय बलोंका गुजरना

फर्श-स्लैब द्वारा दीवारों या कॉलमों तक, नींवों तक और अंतत: नीचे मृदा तंत्र (चित्र 4) पर स्थानांतरित कर दिए जाते हैं। अत: इन सभी संरचनात्मक घटकों (फर्श-स्लैब, दीवारें, कॉलम और नींवें) और इनके बीच के संयोजनों को इन जड़त्वीय बलों को अपने में से होकर सुरक्षित रूप से गुजार पाने हेतु डिजायन किया जाना आवश्यक है। जड़त्वीय बलों के स्थानांतरण में दीवारें और कॉलम बहुत अहम् होते हैं। लेकिन, पारम्परिक निर्माण कार्य में डिजायन तथा निर्माण के दौरान दीवारों और कॉलमों की तुलना में फर्श-स्लैबों और बीमों पर अधिक ध्यान देने के साथ.साथ अधिक सावधानी से भी काम लिया जाता है। दीवारें आपेक्षिक रूप से पतली और अक्सर चिनाई के भंगुर पदार्थ से निर्मित होती हैं। भूकम्प के क्षैतिज जड़त्वीय बलों को अपनी मोटाई की दिशा में

(क) सन् 1991 में उत्तरकाशी (भारत) में आए भूकंप के दौरान पत्थर की चिनाईवाली दीवारों का आंशिक रूप से ध्वस्त होना

(ख) सन् 2001 में भुज (भारत) में आये भूकम्प के दौरान प्रबलित कंक्रीट वाले कॉलमों (और भवनों) का ध्वस्त होना

चित्र 5 : क्षैतिज भूकम्पी बलों के लिये दीवारों / कॉलमों के डिजाइन का महत्व

झेलते हुए ले जाने में वे कमजोर पड़ जाती हैं। चिनाई की दीवारों की नाकामी विगत में आए अनेक भूकंपों में देखी जा चुकी है। (उदाहरण के लिए, चित्र 5 क)। उसी तरह, खराब ढंग से डिजायन की गई और निर्मित प्रबलित कंक्रीट के कॉलम खतरनाक हो सकते हैं। निचली मंजिल के कॉलमों की कमजोरी के कारण ही सन् 2001 में भुज (भारत) में आए भूकम्प के दौरान अनगिनत भवन ध्वस्त हो गए थे (चित्र 5 ख)।

संदर्भ सामग्री

चोपड़ा, ए. के. (1980), डायनामिक्स ऑफ स्ट्रक्चर्स-ए प्राइमर, ईईआरआई मोनोग्राफ, भूकंप इंजीनियरी अनुसंधान संस्थान, संयुक्त राज्य अमेरिका।

साभार

लेखन : सी.वी.आर. मूर्ति, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर, कानपुर
प्रायोजक : भवन निर्माण सामग्री एवं प्रौद्योगिकी संवर्धन परिषद, नई दिल्ली
अनुवादक : आभास मुखर्जी अनुवाद समीक्षक : स्निग्धा सान्याल